मूल्यः ₹30

मई–जून 2022

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

भाकृअनुप
ICAR

75 आज़ादी का अमृत महोत्सव

गर्मी के प्रकोप से कम होती फलों की मिठास

बढ़ती गर्मी की तपन से मानव, पशु और अन्य जीव-जन्तु ही सिर्फ प्रभावित नहीं हो रहे हैं, बल्कि इसका प्रभाव पेड़-पौधों पर भी पड़ रहा है। हाल के एक अध्ययन के दावे को सच माना जाए तो तेज गर्मी से फलों का आकार घटने के साथ ही मिठास भी कम हो रही है। इस शोध के अनुसार तेज गर्मी से मिठास में 5 से 10 प्रतिशत तक की कमी देखने में आ रही है। इतना ही नहीं इस कारणवश कई फलों के फसलचक्र पर भी नकारात्मक प्रभाव देखने को मिल रहा है। इसका नतीजा कई फलों के जल्द पकने के तौर पर सामने आ रहा है।

चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के बागवानी फसल विभाग के अध्यक्ष डा. वी. के त्रिपाठी द्वारा इस विषय पर किए गए तीन वर्षीय अध्ययन के बाद इस प्रकार के निष्कर्ष सामने आए हैं। अध्ययन में अमरूद, पपीता और आम की दशहरी, लंगड़ा, आम्रपाली, चौसा, बॉम्बेग्रीन, सफेदा तथा बीजू प्रजातियों को शामिल किया गया था। निष्कर्ष के अनुसार आम का पुष्पण मार्च से शुरू होता है और इस दौरान 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान रहना चाहिए। मगर अब यह तापमान इस अवधि में 40 डिग्री सेल्सियस तक प्रायः होने लगा है। इससे परागण की प्रक्रिया प्रभावित होती है और इसका असर फलोत्पादन पर कई प्रकार से पड़ता है। पेड़ पर कम फल लगते हैं और उनका आकार भी छोटा रह जाता है। इसके अलावा समय से पहले फल वृक्ष पर पकने लगते हैं।

इस अध्ययन के अनुसार पहले जितने क्षेत्रफल से 8 क्विंटल आम का उत्पादन होता था वह अब 5 से 6 क्विंटल होने लगा है। इसी प्रकार आम का वजन 200-250 ग्राम से घटकर 175 से 200 तक होने लगा है। आम की दशहरी किस्म जून के बदले मई में आने के कारण इसकी मिठास में भी कमी होती जा रही है।

गर्मी की भीषणता ने बदला पपीता में लिंगानुपात

बढ़ते तापमान के कारण पपीता की खेती करने वाले बागवानों को काफी नुकसान उठाना पड़ रहा है। अप्रैल में तैयार होने वाली पपीते की फसल में तेज गर्मी के कारण लिंगानुपात में जबर्दस्त परिवर्तन देखने में आ रहा है। लगातार अधिक तापमान रहने से पपीते के मादा फल बहुत कम रह जाते हैं। पहले सामान्य तौर यह तापमान 25-30 डिग्री सेल्सियस तापमान होने पर पपीते के पेड़ पर नर और मादा फल बराबर संख्या में देखने को मिलते थे। लेकिन अब तापमान के निरंतर बढ़ने से यह लिंगानुपात बहुत बदल गया है और पेड़ों पर मादा फल बहुत कम तथा नर फल कहीं अधिक संख्या में लगने लगे हैं। यह अध्ययन भी चौधरी चरण सिंह कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय में किया गया है।

बुरांश कोरोना उपचार में लाभदायी

हिमालय क्षेत्र में पाए जाने वाले बुरांश के पौधे में, एंटीवायरल तत्व पाए गए हैं,जिनसे कोरोना संक्रमित मरीजों का इलाज संभव हो सकेगा। बुरांश के पौधे का वैज्ञानिक नाम *रोडोडेंड्रॉन* है। फाइटोकैमिकल, पौधों से प्राप्त एक पादप रसायन है और इसमें बहुत से कार्बनिक यौगिक विद्यमान होते हैं। इनको प्राकृतिक और कम टॉक्सिक होने की वजह से अधिक भरोसेमंद माना जा रहा है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), मंडी और इंटरनेशनल सेंटर फॉर जेनेटिक इंजीनियरिंग एंड बायोटेक्नोलॉजी (आईसीजीईबी) के अनुसंधानकर्ताओं द्वारा पता लगाया गया कि इसके फूल की पंखुड़ियों में ऐसे फाइटोकैमिकल होते हैं, जिनका इस्तेमाल कोविड-19 होने पर उपचार के लिए किया जा सकता है। इसमें बहुत से एंटीवायरल गुण हैं, जो कि वायरस से लड़ सकते हैं।

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी
वर्ष: 43, अंक: 3, मई–जून 2022

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. एस.के. मल्होत्रा** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   पूर्व निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   पूर्व निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन
मुख्य तकनीकी अधिकारी (उत्पादन)
कुलभूषण गुप्ता

आवरण चित्र
अशोक सिंह

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
जे.पी. उपाध्ये
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय सूची

संपादकीय — बागवानी फसलों की उपलब्धियों पर एक नजर–**अशोक सिंह**

विधि
प्रो ट्रे नर्सरी तकनीक से सब्जियों की अगेती खेती — 4
राजेश जलवानिया

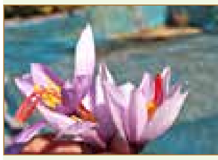
लाल सोना
केसर की वैज्ञानिक खेती — 6
पंकज नौटियाल, चित्रांगद सिंह राघव, गौरव पपनै, नीरज जोशी **और** वरुण सुप्याल

बचाव
बैंगन के प्रमुख रोग — 8
आकाश पाण्डेय **और** कृष्ण कुमार

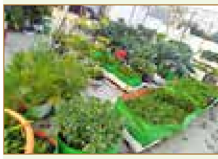
कुछ अलग
छत पर बागवानी — 10
विशाल मेश्राम, आर. पी. अहिरवार, प्रणय भारती, नील कमल पन्द्रे **और** केतकी धूमकेती

पोषण
शरीफा की खेती से करें कमाई — 12
चंदन कुमार, दीपक कुमार गुप्ता **और** धीरज सिंह

महिला सशक्तिकरण
कम लागत में मशरूम उत्पादन — 14
रीता मिश्रा **और** वाई. डी. मिश्रा

हस्तक्षेप
नई तकनीक से खरीफ प्याज की खेती — 16
साबळे पी. ए., विजय महाजन **और** सुषमा साबळे

वैज्ञानिक विधि
मिल्की मशरूम उत्पादन है लाभकारी व्यवसाय — 20
प्रदीप कुमार **और** डी. पी. सिंह

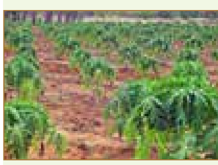
अंतर्वर्ती फसल
पपीते से बढ़ाएं आमदनी — 22
स्वाति साहा **और** जी. के. महापात्रो

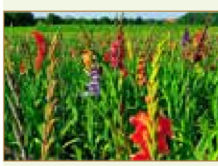
पुष्प
बरसाती फूलों से बढ़ाएं गृहवाटिका की सुन्दरता — 25
हीरा लाल अटल **और** एस. के. बैरवा

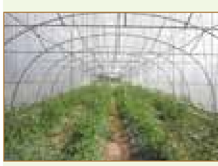
कमाई
कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती से बढ़ाएं आमदनी — 28
महेश चौधरी, अनोप कुमारी **और** सन्तोष चौधरी

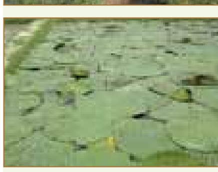
महत्व
मखाना से समृद्धता — 30
लोकेन्द्र कुमार, मंगल सिंह, मनोज कुमार, इन्दुशेखर सिंह **और** भगवती प्रसाद भट्ट

विषय सूची

सफलता गाथा
बैमौसमी मशरूम उत्पादन का बढ़ता प्रचलन 32
हरीश चन्द्र जोशी, कमल कुमार पाण्डे, निधि सिंह **और** कृष्ण कान्त मिश्रा

उपचार
प्याज के रोगों का एकीकृत प्रबंधन 35
आर.सी. गुप्ता **और** पी.के. गुप्ता

नया ट्रेण्ड
उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में अनन्नास उत्पादन की बढ़ती संभावनाएं 38
पी. सी. चौरसिया **और** एस. पी. सिंह

आय सृजन
कैसे हो आम उत्पादकता में वृद्धि 40
अजय कुमार त्रिवेदी

पोषण सुरक्षा
खुंभी की लें भरपूर पैदावार 42
संजीव कुमार गर्ग, आकांक्षा पांडेय **और** राहुल माझी

पोषण प्रबंधन
केले में प्राथमिक पोषक तत्वों का महत्व 44
अर्जुन सिंह, के. जे. जयभास्करन, आर. पिच्चेमुथ्तु **और** एस. उमा

पुष्पोत्पादन
गुलदाउदी की व्यावसायिक खेती 46
प्रियंका शर्मा, गौरव शर्मा **और** अंजना खोलिया

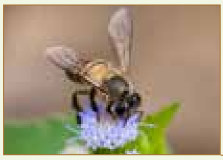
तकनीक
शीतोष्ण फल उत्पादन में कीट परागण का महत्व 48
संगीता शर्मा, मीना ठाकुर, जोगिन्द्र सिंह वर्मा, दिनेश सिंह ठाकुर **और** नीना चौहान

स्वास्थ्य
पोषण एवं आर्थिक समृद्धि हेतु कटहल 50
घनश्याम पाण्डेय, एस. के. शुक्ला, ए. के. त्रिवेदी **और** संजीव कुमार

अरुणाचल प्रदेश
पर्वतीय क्षेत्रों में बागवानी फसलों की संरक्षित खेती 52
प्रवीण कुमार मौर्य, अंकित, सुनील कुमार सिंह, अजिताभ बोरा **और** संजय कुमार द्विवेदी

जानकारी
मई-जून में किये जानेवाले बागवानी कार्य 55
हरे कृष्ण, अरविंद कुमार सिंह **और** रामकेश मीणा

संपादकीय

बागवानी फसलों की उपलब्धियों पर एक नजर

देश में खाद्यान्न फसलों के साल दर साल बढ़ते रिकार्ड उत्पादन से कदमताल करते हुए बागवानी फसलों के उत्पादन में भी लगातार बढ़ोतरी दर्ज की जा रही है। यह वृद्धि उपज में ही नही बल्कि बढ़ते बागवानी क्षेत्रफल में भी देखी जा सकती है। कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा देशव्यापी स्तर पर जारी विभिन्न बागवानी फसलों के क्षेत्र और उत्पादन के वर्ष 2020-21 के अंतिम अनुमान तथा वर्ष 2021-22 के पहले अग्रिम अनुमान के आंकड़ों से बागवानी फसलों में आशातीत वृद्धि के संकेत देखने को मिलते हैं। वर्ष 2020-21 के लिए बागवानी फसलों के अंतिम अनुमान के अनुसार 27.48 मिलियन हैक्टर रकबे से 334.60 मिलियन टन का विभिन्न बागवानी फसलों का उत्पादन हुआ है, जबकि वर्ष 2019-20 की इसी अवधि में यह अंतिम अनुमान क्रमशः 26.48 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल से 320.47 मिलियन टन उपज का था। बागवानी उपज बढ़ोतरी का यह सिलसिला वर्ष 2021-22 के लिए मंत्रालय द्वारा जारी पहले दर्शाए गए अग्रिम अनुमान यानी 27.59 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल तथा 333.25 मिलियन टन के आंकड़ों से भी झलकता है।

सरकार द्वारा जारी उपरोक्त आंकड़ों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि फलोत्पादन और सब्जी उत्पादन वर्ष 2020-21 के अंतिम अनुमान के अनुसार क्रमशः 102.48 मिलियन टन और 200.45 मिलियन टन हुआ। सब्जी उपज में गत वर्ष की तुलना में लगभग 6.5 प्रतिशत की यह वृद्धि है। इसी प्रकार रिकॉर्ड आलू उत्पादन (56.17 मिलियन टन) वर्ष 2020-21 में होने की संभावना जताई गई है जो कि पिछले वर्ष की तुलना में 7.61 मिलियन टन अधिक आंकी गई है। वहीं टमाटर की उपज 20.55 मिलियन टन से बढ़कर 21.18 मिलियन टन होने का अंतिम अनुमान है। सुगंधित एवं औषधीय फसलों में इस अवधि में 12.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। मसालों का उत्पादन 10.14 मिलियन टन (2019-20) की अपेक्षा 9.7 प्रतिशत बढ़कर 11.12 मिलियन टन (2020-21) होने का अंतिम अनुमान जताया गया है।

अब जरा एक नजर वर्ष 2021-22 के प्रथम अग्रिम अनुमान पर भी डालते हैं। कोरोना संकट, जलवायु परिवर्तन सहित कई अन्य कारकों की वजह से इस अवधि में बागवानी फसल उत्पादन 333.3 मिलियन टन होने का अनुमान है, जो वर्ष 2020-21 (अंतिम अनुमान) के मुकाबले 1.35 मिलियन कम हो सकता है। फल उपज 102.5 मिलियन टन (2020-21) की अपेक्षा बढ़कर 102.9 मिलियन टन (2021-22) होने की संभावना है। हालांकि सब्जी उत्पादन 200.4 मिलियन टन से थोड़ा कम होकर 199.9 मिलियन टन होने का अनुमान है। प्याज उत्पादन 31.1 मिलियन टन होने की संभावना व्यक्त की गई है, जो गत वर्ष की तुलना में 5.5 मिलियन टन अधिक है।

किसानों द्वारा परंपरागत खेती के बदले आधुनिक खेती के तौर-तरीकों को अपनाने तथा वैज्ञानिकों द्वारा विकसित उन्नत कृषि प्रणालियों की बदौलत कृषि क्षेत्र में चहुंमुखी प्रगति एवं उत्पादन में नए कीर्तिमान देखने को मिल रहे हैं। उम्मीद की जा सकती है कि इस क्षेत्र में भविष्य में और भी आकर्षक उपलब्धियां देखने को मिलेंगी।

(अशोक सिंह)

प्रो ट्रे नर्सरी तकनीक से सब्जियों की अगेती खेती

राजेश जलवानिया*

कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती गर्म मौसम में की जाती है। इस वर्ग में मुख्य रूप से लौकी, तोरई, करेला, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, टिंडा आदि शामिल हैं। इसके साथ ही मिर्च, टमाटर एवं बैंगन भी इसी मौसम में उगाई जाने वाली सब्जियां हैं। इन सब्जियों की खेती मैदानी क्षेत्रों में गर्मी के मौसम में फरवरी-मार्च से लेकर जून तक की जाती है। इनकी जायद में अगेती खेती, जो अधिक आमदनी देती हैं, करने के लिए कम लागत की पॉली हाउस तकनीक से सर्दी के मौसम में इन सब्जियों की नर्सरी तैयार करके की जा सकती है। सब्जियों के अगेती फसल उत्पादन द्वारा बाजार में भाव भी अधिक मिलता है, जिससे किसानों को अधिक आर्थिक लाभ मिल सकता है।

प्रो ट्रे प्लास्टिक की बनी हुई एक ट्रे होती है जिसमें सांचेनुमा छोटे-छोटे कक्ष होते हैं। इन कक्षों में बीज डालकर प्रो ट्रे को नियंत्रित वातावरण में रखकर पौद तैयार की जाती है। टमाटर, बैंगन एवं सभी कद्दूवर्गीय सब्जियों के लिए 18-20 घन सेंटीमीटर आकार के खांचे वाली प्रो ट्रे का प्रयोग किया जाता है। प्रो ट्रे में तैयार पौद कई मायनों में खेत में तैयार पौद से बेहतर होती हैं। नर्सरी से संरक्षित वातावरण में आधुनिक तरीके से रोगरहित और उच्च गुणवत्ता वाली पौद तैयार की जा सकती है। इसके अलावा प्रो ट्रे में बीज का जमाव और अंकुरण अच्छा होता है वहीं पर्याप्त स्थान मिलने के कारण विकास भी बेहतर होता है। मौसम के अनुरूप पौधों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर रख सकते हैं। प्रो ट्रे मे लगी पौद को एक स्थान

प्लास्टिक से बनी प्रो ट्रे

*उद्यान विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केंद्र, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

सस्ता विकल्प माध्यम है प्रो ट्रे

सस्ते एवं आसानी से उपलब्ध माध्यम के रूप में 9 भाग वर्मीकम्पोस्ट एवं 1 भाग रेत मिलाकर प्रो ट्रे में भरा जा सकता है। इस माध्यम में पौध-गलन की समस्या भी नहीं होती, परन्तु सिंचाई का ध्यान रखना पड़ता है। कृषि विज्ञान केंद्र, चित्तौड़गढ़ की नर्सरी में इसी माध्यम द्वारा सब्जियों की पौद तैयार की जाती है, इसके परिणाम लम्बे समय से अच्छे रहे हैं।

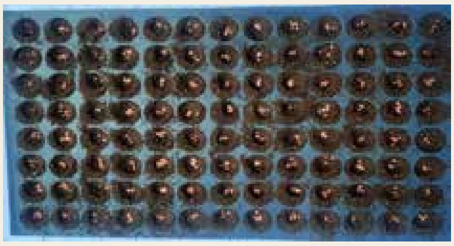

से दूसरे स्थान पर आसानी से लाया और ले जाया सकता है।

प्रो ट्रे हेतु माध्यम तैयार करना

प्रो ट्रे में मिट्टीरहित माध्यम भरा जाता है। यह माध्यम कोकोपिट, परलाइट एवं वर्मीकुलाइट का मिश्रण होता है। इस माध्यम को तैयार करने के लिए साफ जगह या पक्के फर्श पर पॉलीथीन बिछाकर तीन भाग कोकोपिट, एक भाग परलाइट एवं एक भाग वर्मीकूलाइट मिलाकर इस मिश्रण पर पानी छिड़कना चाहिए। पानी डालते समय ध्यान रखें कि मिश्रण न तो सूखा रहे ना ही अधिक गीला रहे। ऐसे मिश्रण को साफ एवं उपचारित प्रो ट्रे में भर दिया जाता है। इस प्रकार भरी हुई प्रो ट्रे तैयार हो जाती है।

कोकोपिट मुख्यतः नारियल के फल के रेशों से बनाया जाता है। कोकोपिट में पौद की जड़ें आसानी से वृद्धि करती हैं तथा कोकोपिट की पानी को रोकने की क्षमता भी बहुत अच्छी होती है।

परलाइट की उत्पत्ति वोल्केनिक चट्टानों से निकले पदार्थ से होती है। इसका रंग लगभग सफेद होता है एवं वजन में यह बहुत ही हल्का होता है। परलाइट में भी पौद की जड़ वृद्धि अच्छी होती है एवं जड़ों को आसानी से ऑक्सीजन उपलब्ध होती है।

वर्मीकुलाइट गंध रहित, अविषैला एवं स्टेराइल प्रवृति का होता है तथा जल्दी खराब भी नहीं होता है। इसकी पानी को रोकने की क्षमता बहुत अधिक होती है तथा पौद की जड़ों के लिए हवा भी आसानी से उपलब्ध हो जाती है। वर्मीकुलाइट में कुछ मिनरल्स भी उपलब्ध होते हैं जो पौद वृद्धि के लिए अति आवश्यक हैं। वर्मीकुलाइट का प्रयोग करने से पौद में फफूंद व सड़न की समस्या नहीं आती है।

प्रो ट्रे में बुआई

माध्यम द्वारा भरी हुई प्रो ट्रे के प्रत्येक खांचे में अंगुली से हल्के गड्ढे बनाकर प्रत्येक गड्ढे में उन्नत किस्म के उपचारित बीजों की बुआई करते है एवं इसके बाद प्रो ट्रे पर एक पतली परत के रूप में मिट्टीरहित माध्यम डाला जाता है जिससे कि बीज खुले नहीं रहें। तत्पश्चात प्रो ट्रे को समतल स्थान पर या स्टैंड पर रखकर झारे की सहायता से हल्का पानी दिया जाता है।

प्रो ट्रे का रखरखाव

सर्दी के मौसम में बीज अंकुरण के लिए बहुत ध्यान रखना आवश्यक होता है क्योंकि तापमान बहुत कम होता है। प्रो ट्रे में आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए। प्रो ट्रे को

पॉली हाउस में प्रो ट्रे में पौद उत्पादन

कीटरोधी नेट से बने कक्ष में रखना चाहिए जिससे पौद को कीट एवं रोगयुक्त रखा जा सके। कक्ष को पॉलीथीन से ढककर तापमान को कम किया जा सकता है। इस प्रकार पौद अलग अलग सब्जियों के हिसाब से 25 से 45 दिनों में तैयार हो जाती है।

पौद निकालते समय तने से पकड़कर प्रो ट्रे के कक्ष को अंगुली से ऊपर की तरफ उठाया जाता है जिससे माध्यम सहित पौद ट्रे के बाहर आ जाती है। ऐसी पौद में जड़ें सफेद धागे की तरह माध्यम के आसपास लिपटी रहती हैं। उपयुक्त वातावरण में प्रायः शाम के समय जनवरी के अंतिम सप्ताह या फरवरी के प्रथम सप्ताह में तापमान में बढ़ोतरी हो जाती है एवं सर्दी का असर कम हो जाता है तब पौद को प्रो ट्रे से निकाल कर पहले से तैयार खेत में रोप दिया जाता है। इसके बाद पौद रोपण के तुरंत बाद सिंचाई की जाती है

इस विधि से पौद तैयार कर खेती करने से सामान्य मौसम से 1 से ½ महीने पहले ही इन सब्जियों का उत्पादन होने लगता है एवं किसान को अधिक दाम मिलता है ■

प्रो ट्रे नर्सरी तकनीकी के लाभ

- इस विधि से पौद कम समय में तैयार हो जाती है।
- पौद बनाने के लिए उपयोग किए जाने वाले बीज की मात्रा कम उपयोग में ली जाती है क्योंकि इस तकनीक में बीज विभिन्न वर्गों में बोए जाते हैं और प्रत्येक बीज स्वस्थ पौद देता है।
- मिट्टी से पैदा होने वाली बीमारियों और कीटों से पौद को संरक्षित किया जा सकता है।
- जब क्यारी पर पौद तैयार होती है तो 10-15 प्रतिशत पौद की जड़ें रोपण के समय क्षतिग्रस्त हो जाती हैं, लेकिन इस तकनीक में पौद मरने की आशंका नहीं होती है।
- इस तकनीक से रोपाई के बाद पौद बहुत कम समय में खेत में स्थापित हो जाती है।
- संरक्षित संरचनाओं का उपयोग करके इस तकनीक के साथ किसी भी समय किसी भी सब्जी की फसल को तैयार किया जा सकता है।
- इस तरह, तैयार पौद को पैकिंग करने के बाद लंबी दूरी तक पहुंचाया जा सकता है।
- इस तकनीक में कम उर्वरक और सिंचाई की आवश्यकता होती है।
- इस विधि का पालन करके सभी पौद समान दर पर बढ़ते हैं ताकि खेत में रोपित करने के बाद भी वृद्धि दर बराबर हो।
- इस विधि से महंगी संकर किस्मों का उपयोग कुशलता से किया जा सकता है।

केसर की वैज्ञानिक खेती

पंकज नौटियाल*, चित्रांगद सिंह राघव*, गौरव पपनै*, नीरज जोशी* और **वरुण सुप्याल***

अपने अनुपम गुणों एवं सुगंध के लिए जाना जाने वाला केसर सम्पूर्ण विश्व का एक प्रमुख मसाला है। ट्रेड इकोनोमी के अनुसार वर्ष 2019-20 में भारत ने 132 करोड़ रुपए से अधिक का केसर अफगानिस्तान व अन्य देशों से आयात किया। भारत, विश्व का चौथा सबसे ज्यादा केसर आयात करने वाला देश है जबकि स्पेन व अफगानिस्तान विश्व के सबसे बड़े निर्यातक देश हैं। महंगा होने के साथ-साथ यह औषधीय गुणों से भरपूर भी है, इसीलिये केसर को रेड गोल्ड या लाल सोना भी कहते हैं और इसका वानस्पतिक नाम *क्रोकस सैटाइवस* है।

विश्व में केसर की खेती ईरान, स्पेन, इटली, ऑस्ट्रेलिया, फ्रांस, इंग्लैंड एवं भारत में की जाती है। भारत में केसर मुख्यत: जम्मू कश्मीर व हिमाचल प्रदेश के कुछ स्थानों पर पैदा किया जाता है। मुख्यत: केसर की खेती भारत में जम्मू कश्मीर के पामपुर (पंपोर), किश्तवाड़, पुलवामा, बडगाम के सीमित क्षेत्रों में अधिक की जाती है। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू, चंबा, मंडी, कन्नूर आदि क्षेत्रों में भी केसर की व्यावसायिक खेती की जा रही है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में उत्तरकाशी के हर्षिल क्षेत्र, पिथौरागढ़, अल्मोड़ा व चमोली में भी केसर के उत्पादन के सफल प्रयोग किये गए हैं।

*कृषि विज्ञान केंद्र (भाकृअनुप - वि.पर्व.कृ. अनु.सं.), चिन्यालीसौड -249196, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

भूमि का चयन एवं जलवायु

केसर की खेती शीतोष्ण जलवायु के 1500-2800 मीटर की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में की जाती है। अच्छी उपज के लिए इसके पौधों के लिए लगभग 8 से 11 घंटे प्रकाश और दिन के समय 20-25 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान तथा रात के समय 5-10 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। सामान्यत: धूप वाले इलाके, जहाँ गर्मियों में लगभग 400-450 मिलीमीटर वर्षा होती है तथा जो इलाके जाड़ों में बर्फ से ढके रहते हैं, वहां पर केसर की खेती उत्तम होती है। केसर का संवर्धन घनकंदों द्वारा किया जाता है। ऐसे में घनकंद को सड़न

केसर में पुष्पण

से बचाने के लिए भूमि में जल निकासी का उचित प्रबंध होना चाहिए। आमतौर पर केसर की खेती ऊँची क्यारियां बनाकर की जाती है। छोटे आकार के (2मी. x 1मी. x 15 सें.मी.) भूमि से उठे हुए बैड अच्छे परिणाम देते हैं।

बुआई का समय

केसर बहुवर्षीय फसल है, जिसका वानस्पतिक प्रसारण लगभग 2.5 से 5.0 सेंटीमीटर व्यास तक के घनकंदों द्वारा किया जाता है। एक बार बोने के बाद केसर की फसल में 8 से 10 वर्षों तक पुष्पण होता है। प्याज के समान इसकी गुटिकाएँ (घनकंद) जुलाई से लेकर अगस्त के पहले हफ्ते तक रोपी जाती हैं। बुआई से पूर्व घनकंदों को उपचारित कर बोना चाहिए। दो घनकंदों के बीच कम से कम 10 सेंटीमीटर की दूरी तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 सेंटीमीटर एवं 6-7 सें.मी. की गहराई रखी जानी चाहिए।

कटाई और सुखाना

अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में केसर की फसल में पुष्पण सितम्बर से तथा निचले पहाड़ी क्षेत्रों में मध्य अक्टूबर से प्रारंभ होता है तथा यह दिसम्बर तक रहता है। अगस्त तक फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है। केसर के फूलों पर दिखाई देने वाली पंखुड़ियां जब लाल भगवा रंग की दिखाई देने लगें तब उन्हें तोड़कर संग्रहित कर लें। फूलों की तुड़ाई का कार्य आमतौर पर हाथ से सुबह किया जाता है। इसके फूलों का रंग बैंगनी, नीला एवं सफेद होता है। ये फूल कीपनुमा आकार के होते हैं। इनके भीतर लाल या नारंगी रंग तीन मादा भाग पाए जाते हैं। इस मादा भाग को वर्तिका (तन्तु) एवं वर्तिकाग्र कहते हैं। यही केसर कहलाता है। प्रत्येक फूल में केवल तीन केसर ही पाए जाते हैं। लाल-नारंगी रंग के आग की तरह दमकते हुए केसर को संस्कृत में 'अग्निशिखा' नाम से भी जाना जाता है। फूल में तीन पीले नर भाग भी होते हैं। केसर को निकालने के लिए पहले फूलों को चुनकर किसी छायादार स्थान में सुखा लेते हैं। सूख जाने पर फूलों से मादा अंग यानी केसर को अलग कर लेते हैं। रंग एवं आकार के अनुसार इन्हें - मोगरा, लच्छी, गुच्छी आदि श्रेणियों में वर्गीकृत करते हैं। लगभग 150000 फूलों से 1 किलो सूखा केसर प्राप्त होता है।

केसर में तुड़ाई उपरांत प्रबन्धन है आवश्यक

सारणी: प्रति नाली भूमि पर (200 मी^{2}) केसर की खेती का आर्थिक विश्लेषण (रुपये)

क्र.स.	वर्ष	लागत	सकल आमदनी	शुद्ध आमदनी
1	रोपण के प्रथम वर्ष	22000	16000	-6000
2	रोपण के दूसरे वर्ष	1500	17500	16000
3	रोपण के तीसरे वर्ष	2000	18000	16000
4	रोपण के चौथे वर्ष	2200	22000	19800
5	रोपण के पांचवे वर्ष	2500	25000	22500
	कुल	30200	98500	68300
	औसत प्रति वर्ष प्रति नाली	6040	19700	13660
	औसत प्रति वर्ष प्रति हैक्टर	302000	985000	683000

(बीज दर : 7000-8000 कंद/नाली; उत्पादन : 60-80 ग्राम/नाली; कीमत: 200-250 रुपये/ग्राम)

आर्थिक विश्लेषण

भारत की अनेक शोध संस्थाओं जैसे सी.एस.आई.आर- हि जै प्रौ सं, पालमपुर के वैज्ञानिकों ने केसर की खेती के कई परीक्षण किये हैं। विभिन्न परीक्षणों से यह पाया गया है, कि एक नाली भूमि पर केसर का उत्पादन कर द्वितीय वर्ष से 15000 से 16000 तक की अतिरिक्त आमदनी अर्जित की जा सकती है। जबकि चौथे से पांचवे वर्ष से 19000-22000 रुपये प्रति नाली तक की आमदनी अर्जित की जा सकती है। यह कह सकते हैं कि यदि केसर को सेब के पुराने बगीचों के बीच में इंटर क्रॉप के रूप में लगाया जाय तो प्रति हैक्टर भूमि से 6-7 लाख रुपए की अतिरिक्त आमदनी ली जा सकती है।

उपज

सूखे केसर की औसत उपज 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर की है। केसर पुष्प के लगभग 5 किलोग्राम ताजे वर्तिकाग्र से सुखाये जाने पर 1 किलोग्राम केसर प्राप्त किया जा सकता है। ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में सेब के बगीचों के मध्य केसर की वैज्ञानिक खेती से रोपण के पांचवें वर्ष के बाद किसान प्रति हैक्टर 6.0 से 7.0 लाख की अतिरिक्त आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। बाजार में केसर की कीमत दो से तीन लाख रुपये प्रति किलोग्राम तक आंकी गयी है।

बैंगन के प्रमुख रोग

आकाश पाण्डेय* और **कृष्ण कुमार****

बैंगन की अच्छी पैदावार के लिए गर्म जलवायु व जल निकासयुक्त दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। आयुर्वेदिक चिकित्सा में बैंगन का महत्वपूर्ण स्थान है। सफेद बैंगन मधुमेह रोगी के लिए अच्छा होता है। कृषकों की आमदनी बढ़ाने में बैंगन की उन्नत खेती महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

बैंगन की फसल को विभिन्न प्रकार के रोग प्रभावित करते हैं। सही समय पर रोगों का नियन्त्रण न किया जाए तो बाजार मूल्य में गिरावट होती है। इसीलिए बैंगन के प्रमुख रोगों को देखकर उनका सही समय पर नियन्त्रण करें।

छोटी पत्ती रोग

यह रोग बैंगन में माइकोप्लाज्मा द्वारा होता है। इसमें बैंगन का रोगी पौधा बौना रह जाता है तथा पत्तियां आकार में छोटी रह जाती हैं। इससे रोगी पौधों पर फूल नही बनते हैं और पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है। अगर पौधों पर फूल भी लग जाते हैं तो वे कठोर होते हैं। ऐसे रोगी पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए।

उपचार-(1) रोगरोधी किस्मों को उगाएं जैसे-कराइन सैलटायन, सैल 2.52-2 पूसा, पर्पिल क्लस्टर आदि।

(2) पौधों को रोपित करने से पहले टेट्रासाइक्लिन के 100 पी.पी एम. घोल में डुबोकर रोपाई करनी चाहिए।

आर्द्रगलन रोग का प्रभाव

आर्दगलन रोग

यह रोग बैंगन में *पीथियम अफेनिडर्मेटम* नामक कवक द्वारा होता है। पौधों में यह रोग दो अवस्थाओं में लगता है। पहली अवस्था में पौधों के भूमि से निकलने से पूर्व या तुरन्त पश्चात् और दूसरी अवस्था में पौध उग जाने पर प्रारम्भिक अवस्था में पौधे निकलते ही मर जाते हैं। दूसरी अवस्था में पौधे के भूमि के सम्पर्क में आने वाले तने के हिस्से पीले हरे रंग के विक्षत बनते हैं। पौधों का मुरझाना व सूख जाना पौधशाला में रोग का प्रमुख लक्षण है।

उपचार-(1) पौधशाला से रोगी पौधों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए।

(2) खड़ी फसल में बोर्डोमिश्रण 0.8 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़कना चाहिए।

(3) बीज को थाइरम या कैप्टॉन नामक कवकनाशी से 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से बुआई से पहले उपचारित करें।

*सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, **नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या

सूत्रकृमि

बैंगन में सूत्रकृमि द्वारा भी रोग होता है। यह पेलाडोगाइन की अनेक प्रजातियों द्वारा होता है। इसमें रोगी पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं तथा पौधा बौना रह जाता है। पत्तियां पीली होकर लटक जाती हैं। इस रोग के कारण पौधे नष्ट नहीं होते परन्तु गांठों के सड़ने पर सूख जाते हैं।

उपचार-(1) रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए। भूमिशोधन के लिए नेभागान से 12 लीटर प्रति हैक्टर की दर से भूमि को फसल बोने से पहले 3 सप्ताह पहले उपचारित करें।

(2) खली व लकड़ी का बुरादा 25 क्विंटल प्रति हैक्टर की दर से नमी होने पर भूमि में मिला दें।

आर्द्रगलन रोग से प्रभावित बैंगन की फसल

स्कलेरोटीनिया अंगमारी रोग

बैंगन में यह रोग स्कलेरोटीनिया नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण में संक्रमित जगह पर धब्बे बनते हैं। ये धीरे-धीरे तने या शाखा को घेर लेते हैं तथा पूरे पौधे में फैल कर संक्रमित भाग को नष्ट कर देते हैं। तने के आधार पर संक्रमण होने पर पौधा मुरझाया दिखाई देता है। तने के पिथ में भूरे रंग से काले रंग का स्केलोरेशिया बनाता है।

उपचार-(1) खेत में ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई कर दें।

(2) *ट्राइकोड्रामा हारजीयेनम* से बीज को उपचारित कर बोना चाहिए।

(3) रोगी पौधों को तथा फसल अवशेषों को जला देना चाहिए। ■

कृषि में बढ़ता प्लास्टिक का उपयोग

भारत में, विश्व की कुल आबादी का 17.84 प्रतिशत हिस्सा है। इनकी आहार आवश्यकताओं की पूर्ति 2.4 प्रतिशत भूमि और 4 प्रतिशत जल संसाधनों से पूरी होती है। भारत की अमूमन 65% आबादी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। भविष्य में सिकुड़ते प्राकृतिक संसाधनों (जमीन और जल) के कारण बढती जनसंख्या के लिए पर्याप्त खाद्यान्न और कृषि आधारित उद्योगों को निरंतर कच्चा माल उपलब्ध करवाना देश के सामने सबसे बड़ी चुनौती है।

प्रकृति प्रदत्त जल का अमूमन 80% भाग कृषि क्षेत्र में उपयोग होता है। वर्षा जल की अनिश्चितता के कारण जल संसाधनों में वर्ष दर वर्ष कमी देखने को मिल रही है जिसका सीधा असर कृषि उत्पादन पर दिखाई दे रहा है अत: समय रहते हमें प्राप्त वर्षा जल और उपलब्ध जल संसाधनों के कुशल संरक्षण पर ध्यान देना होगा। आजकल किसान पारंपरिक कृषि के साथ-साथ आधुनिक कृषि आयामों को भी अपना रहे हैं। इस क्षेत्र में प्लास्टिक का उपयोग भी एक नई पहल है। आदान के रूप में प्लास्टिक के प्रयोग से भारत के जागरूक किसान अब प्रति इकाई अधिकतम गुणवत्तायुक्त फसल उत्पादन ले कर कीर्तमान स्थापित कर रहे हैं। इससे देश में एक नई हरित क्रांति का मार्ग प्रशस्त हो गया है।

प्राकृतिक संसाधनों विशेषकर जल संरक्षण, जल के कुशल प्रबंधन तथा वैज्ञानिक फसल प्रबंधन से ही भारतीय कृषि को टिकाऊ बनाया जा सकता है। इस दिशा में प्लास्टिक का उपयोग महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहा है। प्लास्टिक का प्रयोग सूक्ष्म सिंचाई तथा नियंत्रित वातावरण में खेती करने हेतु बढ़ रहा है।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए रसायन एवं पेट्रोकेमिकल्स विभाग (भारत सरकार) उपज और निवेश उपयोग दक्षता में सुधार करने की क्षमता से प्रभावित होकर प्लास्टिक का उपयोग कृषि, बागवानी, जल प्रबंधन और अन्य संबद्ध क्षेत्रों में करने के लिए प्रचार-प्रसार कर रहा है। इसके लिए 1981 में एक समिति भी गठित की थी, जिसे बागवानी में प्लास्टिक के खेतों के अनुप्रयोगों को बढ़ावा देने के लिए "बागवानी में प्लास्टिक की खेती के लिए राष्ट्रीय समिति" (एन.सी.पी.ए.एच.) के रूप में 2001 में समन्वित तरीके से काम करने के लिए पुनर्गठित किया गया। एन.सी.पी.ए.एच. कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार में काम कर रही है। इस समिति की सिफारिशों के आधार पर सरकार ने प्लास्टिक के क्षेत्र में अनुसंधान और विस्तार गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए देश में 22 प्रिसिजन फार्मिंग डेवलपमेंट सेंटर्स (पी.एफ.डी.सी.) की स्थापना की है।

प्लास्टिक का उपयोग कृषि, बागवानी, अनाज भण्डारण, जल प्रबंधन और सम्बंधित क्षेत्रों में किया जाता है। इससे उच्च उपज गुणवत्ता वाले उत्पाद, बेहतर सिंचाई दक्षता, फसल एवं पर्यावरण संरक्षण और जलसंरक्षण प्राप्त होता है। प्लास्टिक का प्रयोग कृषि विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह मृदा को अवशोषित कर मृदा के तापमान में वृद्धि करता है। मृदा का वाष्पीकरण कम करके नमी को बनाए रखता है। पौधों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए शेड नेट हाउस, प्लास्टिक द्वारा ही तैयार किए जाते हैं। ये अलग-अलग रंगों के बनाए जाते हैं। इनका उपयोग हवा, गर्मी, ओलों, पक्षी, बर्फ, ठंड तथा वृक्षारोपण विभिन्न कार्यों के लिए किया जाता है। ग्रीनहाउस प्रणाली में भी प्लास्टिक का प्रयोग किया जाता है। इसमें पौधों को नियंत्रित वातावरण में विकसित किया जाता है। लो टनल भी ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा करने वाली एक लघु संरचना है। इसमें प्रकाश संश्लेषण की दर में वृद्धि से उपज को बढ़ाया जाता है। प्लास्टिक पलवार द्वारा भी मिट्टी को आच्छादित किया जाता है। इनके अलावा टपक सिंचाई, छिड़काव सिंचाई, जलाशय स्तर, जल निकासी, पैकेजिंग तथा नर्सरी प्रबंधन में भी प्लास्टिक का उपयोग भरपूर तरीके से किया जाता है।

हवा, पानी की तरह अब धीरे-धीरे प्लास्टिक भी हमारे जीवन का जरूरी हिस्सा बन गया है। वर्तमान कृषि में प्लास्टिक का प्रयोग न केवल किसानों को, बल्कि उपभोक्ताओं को भी लाभ दे रहा है। ■

छत पर बागवानी

विशाल मेश्राम*, **आर. पी. अहिरवार***, **प्रणय भारती***, **नील कमल पन्द्रे*** और **केतकी धूमकेती***

वर्तमान समय में कोरोना संक्रमण के कारण हुई लॉकडाउन की परिस्थिति में अधिकतर लोगों का घर से बाहर जाना अवरूद्ध हो गया है। इसके कारण समय व्यतीत करना मुश्किल होता जा रहा है। काम के न होने और दिनभर खाली समय होने के कारण कई प्रकार के नकारात्मक विचार मन में आने से लोगों का मानसिक स्वास्थ्य खराब हो रहा है। इसके साथ ही सोशल मीडिया जैसे व्हाटस ऐप, फेसबुक, समाचार चैनलों आदि में वर्तमान परिस्थति की भयावह तस्वीर सामने आने के कारण कई प्रकार के डर दिमाग में मानसिक कमजोरी, तनाव, अवसाद की स्थितियां बना रहे हैं। इन परिस्थितियों से स्वयं को बाहर निकालने के लिए अपने खाली समय को कलात्मक/नूतन कार्यो में व्यस्त करना ही एक मात्र विकल्प है। ऐसा ही एक विकल्प छत पर बागवानी है। इससे फायदा यह होगा कि कोरोना से बचने हेतु पौष्टिक, स्वास्थ्यवर्धक एवं संक्रमणरहित खाद्य सामग्रियों का सेवन स्वयं के द्वारा जैविक रूप से उगाई गई सब्जियां, फलों के द्वारा किया जा सकता है।

छत पर उगाई गई सब्जियों में अपने विवेक से रासायनिक दवाओं एवं खादों के प्रयोग की जगह जैविक तरीके से उगाया जा सकता है। 21वीं सदी में तेजी से कृषि योग्य भूमि के रकबे एवं क्रय शक्ति में कमी आ रही है। इस कारण बागवानी हेतु गृह वाटिका के लिए स्थान उपलब्ध नही हो पाता और लोगों की बागवानी के प्रति रुचि दबी रह जाती है। छत पर आसानी से यह कार्य किया जा सकता है। इस कार्य के लिए घरों में बेकार पड़ी वस्तुओं जैसे- प्लास्टिक की बाल्टी, प्लास्टिक के टब, कूलर के टूटे पानी के टब, पेन्ट के खाली डब्बे, सब्जी रखने वाले पुराने क्रेट, तेल के खाली टीन, प्लास्टिक के डब्बे, सीमेन्ट की खाली बोरियों का उपयोग किया जा सकता है। इसके साथ ही वर्तमान में प्लास्टिक के गहरे कैप्सूल आकार के गहरे गमले, ग्रो बैग, बाजार में या ऑनलाईन मार्केट से आसानी से प्राप्त किए जा सकते हैं।

1. **पौधे लगाने के लिए आवश्यक सामग्री:-** गमलों अथवा उपयोग किए जाने वाले ग्रो बैग, टब, आदि में अच्छी उपजाऊ दोमट मिट्टी, केंचुआ खाद, कम्पोस्ट, कोकोपिट, वर्मी कोलाईट आदि का प्रयोग करना चाहिए।
2. **गमला तैयार करने की विधि:-** गमले में उचित जल निकास के लिए तली में दो-तीन छेद अनिवार्य रूप से करने चाहिए एवं मिट्टी तथा केंचुआ खाद कोकोपिट मे अच्छी तरह मिलाकर

*कृषि विज्ञान केंद्र, मंडला (म.प्र.)

छत पर बागवानी के फायदे

छत पर बागवानी करने के बहुत अधिक फायदे होते हैं, एक तो हरी और रसायनमुक्त ताजी सब्जियां मिलती हैं जो कि मार्केट या मंडी में मिलना मुश्किल है। इससे छत भी हरा-भरा रहता है, जिसकी वजह से यहाँ पर शाम के समय बैठ सकते हैं, व्यायाम कर सकते हैं और खुद को प्रकृति के नजदीक महसूस कर सकते हैं। खुद जैविक सब्जियां उगाकर खाने से मार्केट में मिलने वाली रसायनयुक्त सब्जियों को खाने से होने वाली बीमारियों से भी बचा जा सकता है। साथ ही अतिरिक्त सब्जियों का विक्रय करके आय भी प्राप्त की जा सकती है। बागवानी करने से मन प्रसन्न रहता है और मानसिक अवसाद नही होता है। इस दौरान नित्य क्रिया कलाप जैसे:- सिंचाई निराई गुड़ाई आदि से शरीर की स्वत: ही कसरत हो जाती है जिससे शरीर निरोगी रहता है।

सारणी: ग्रो बैग साईज एवं उसमें लगाये जाने वाले फल एवं सब्जियां

ग्रो बैग का आकार		उगाई जाने वाली सब्जियां
(फुट में)	(इंच में)	
0-75 x 0-75	9 x 9	गाजर, मिर्च, सजावटी पौधे, फूल जैसे:- गुलाब, लिली
1 x 1	12 x 12	टमाटर, भिंडी, मिर्ची, सजावटी पौधे
1-25 x 1-25	15 x 15	हल्दी, भिन्डी, तुलसी, शिमला मिर्च, अदरक आदि
1-5 x 0-75	18 x 9	हरी पत्तेदार सब्जियां जैसे पालक, धनिया, प्याज पुदीना आदि
1-5 x 1-5	28 x 18	बेल वाली सब्जियां जैसे:- लौकी, बरबटी, ककड़ी, कद्दू, तोरई, करैला आदि
3 x 3	36 x 36	फलदार पौधे जैसे:- नीबू, आम, पपीता, केला, अनार, अमरूद आदि

गमले में भरना चाहिए। इनमें किसी भी प्रकार के खरपतवार कंकड़-पत्थर आदि नही होने चाहिए।

3. **गमले में पौधा तैयार करने की विधि:-** खाद एवं मिट्टी के मिश्रण से तैयार गमले में सीधे बीज डालकर और उसे मिट्टी से ढक कर समय-समय पर पानी डालने से कुछ दिनों में पौधा तैयार हो जाता है। इससे समय अधिक लगता है। अत: सब्जियों की अलग से रोपणी तैयार कर सीडलिंग को गमले में रोपित किया जा सकता है।

4. **पौधे की देखभाल:-** समय-समय पर पानी एवं तरल जैविक खाद का छिड़काव करना चाहिए। गमले को ऐसे स्थान पर रखना चाहिए, जहां पर्याप्त धूप मिलती रहे। इसके साथ ही हर 5-6 दिनों में खुरपी की सहायता से निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए, जिससे ऊपरी सतह सख्त न हो पाए।

5. **बागवानी हेतु आवश्यक औजार एवं सामग्री:-**

(अ) दस्ताने:- गमले में मिट्टी तथा खाद डालते समय एवं निराई-गुड़ाई करने के दौरान मिट्टी नाखुनों में फंस जाती है एवं हाथ भी गंदे हो जाते हैं। अत: इससे बचने के लिए दस्ताने की आवश्यकता होती है।

(ब) खुरपी:- गमले में मिट्टी डालने के लिए एवं निराई-गुड़ाई, बीज बोने और गमले में बीज बोते समय मिट्टी में लाईनिंग बनाने के लिए तथा खरपतवार आदि को समय-समय पर निकालने के लिए खुरपी की आवश्यकता होती है।

(स) कैंची और प्रूनर:- पौधे जब बड़े हो जाते हैं और उनकी टहनियां ज्यादा फैल जाती हैं तो टहनियों को काटना-छांटना आवश्यक होता है। इससे नई शाखाएं निकलती हैं तथा पौधे को उचित आकार भी दिया जाता है। इसके लिए कैंची या प्रूनर की आवश्यकता होती है।

(द) रस्सी:- बेल या लता वाली सब्जियों के पौधे बहुत ज्यादा लंबे होते हैं और जहां इन्हें रास्ता मिलता है उधर की तरफ बढ़ने लगते हैं। इसलिए इन्हें सही दिशा में रखने के लिए रस्सी से सधाई करने की आवश्यकता होती है। ■

भाकृअनुप की लोकप्रिय पत्रिका

'खेती' मई, 2022 अंक (पशुपालन विशेषांक) के प्रमुख आकर्षण

- भैंस का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्व
- शूकर पालन है एक लाभकारी व्यवसाय
- ऊंटनी के दूध से आइसक्रीम उत्पादन
- पशुओं के लिए वर्षभर हरा चारा
- भेड़ और बकरी का आवास प्रबंधन
- खरगोश पालन-कम लागत में अधिक मुनाफा
- बछड़ों के रोग एवं निदान
- पांचाली है भारत की एक बहुउद्देशीय भेड़
- पशुओं के आहार में नमक का महत्व
- जैविक पशुपालन के लिए चारा उत्पादन
- पक्षी फ्लू
- बटेर पालन का बढ़ता महत्व
- डेरी पशुओं में उपापचयन संबंधित विकार
- शूकर पालन की चुनौतियां और समाधान
- भेड़ अनुकूल आवास प्रबंधन
- जलवायु परिवर्तन और पशुधन
- डेरी पशुओं के लिए सामान्य आहार
- मवेशियों में लंपी स्किन डिजीज
- कैसे करें दुधारू पशु का चयन

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 25843657, www.icar.org.in

शरीफा की खेती से करें कमाई

चंदन कुमार*, दीपक कुमार गुप्ता* और **धीरज सिंह****

सीताफल (शरीफा) अत्यंत पौष्टिक एवं स्वादिष्ट फल है। इसे गरीबों का फल कहा जाता है। इसका उत्पत्ति स्थल उष्ण अमेरिका माना जाता है। अमेरिका में इसका नामकरण इसके स्वाद के अनुरूप 'शुगर एप्पल' किया गया है। यह फल मध्य प्रदेश, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश व असोम राज्यों के जंगलों में मिल जाता है। भारत में इसकी खेती कम पैमाने पर हो रही है। देश में शरीफा की खेती की बहुत अच्छी संभावनायें हैं।

शरीफा का वानस्पतिक नाम *अन्नोना स्क्वामोसा* है। इसमे उच्च कैलोरी के साथ, प्राकृतिक शर्करा, आयरन और विटामिन सी भरपूर मात्रा में होते हैं। इसका गूदा सफेद रंग का और मलाईदार होता है। इसे मिल्कशेक और आइसक्रीम बनाने में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके बीज, पत्ते, छाल सभी औषधि के रूप में उपयोग किये जाते है। इसकी पत्तियाँ गहरी हरे रंग की होती हैं। इसमें एक विशेष महक होने की वजह से पशु इसे नहीं खाते हैं। इसकी पत्तियाँ हृदय रोग में टॉनिक का कार्य करती हैं क्योंकि इसकी पत्तियों में टेट्राहाइड्रो आइसोक्विनोसीन अल्कलायड पाया जाता है। इसकी जड़ें तीव्र दस्त के उपचार में लाभकारी होती हैं। शरीफे के बीजों से निकालकर सुखाई हुई गिरी में 30 प्रतिशत तेल पाया जाता है। इससे साबुन तथा पेन्ट बनाया जाता है।

*भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवाड़ 306 401 (राजस्थान)

**भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गौरीया कर्मा, बरही, हजारीबाग, 825405 (झारखंड)

जलवायु

शरीफा के पौधे के लिए वैसे तो किसी विशेष जलवायु की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी अच्छे उत्पादन के लिए गर्म और शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र, जहाँ पाला नहीं पड़ता है, अधिक उपयुक्त होते है। ज्यादा ठंड और पाला पड़ने से इसके फल सख्त हो जाते हैं और वो पक नही पाते हैं।

भूमि

शरीफा के पौधे लगभग सभी प्रकार की भूमि, रेतीली मिट्टी, कमजोर एवं पथरीली जमीन और ढालू जमीन में पनप जाते हैं परन्तु अच्छी जल निकास वाली दोमट मिट्टी इसकी बढ़वार एवं पैदावार के लिये उपयुक्त होती है। कमजोर एवं पथरीली भूमि में भी इसकी अच्छी पैदावार होती है। इसका पौधा भूमि में 50 प्रतिशत तक चूने की मात्रा सह लेता है। इसकी खेती के लिए भूमि का पी.एच.मान 5.5 से 6.5 के बीच अच्छा माना जाता है। लेकिन 7-9 पी.एच. मान वाली भूमि पर भी उत्पादन लिया जा सकता है।

संवर्धन या प्रसारण

शरीफे को मुख्य रूप से बीज द्वारा ही प्रसारित किया जाता है। किन्तु अच्छी किस्मों की शुद्धता बनाये रखने, तेजी से विकास एवं शीघ्र फसल लेने के लिये वानस्पतिक विधि द्वारा पौधा तैयार करना चाहिए। शील्ड बडिंग में जनवरी से जून तथा सितम्बर-अक्टूबर के महीने में अच्छी सफलता प्राप्त होती है।

किस्में

बाला नगर-झारखंड क्षेत्र के लिए यह एक उपयुक्त किस्म है। इसके फल हल्के हरे रंग के होते हैं।

अर्का सहन-यह एक संकर किस्म है, जिसे भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू से विकसित किया गया है। यह किस्म अपने मीठे स्वाद, सफेद गूदा, उन्नत भण्डारण क्षमता व कम बीजों (9 ग्राम प्रति 100 ग्राम फल भार) के कारण पहचानी जाती है। इसके फल अपेक्षाकृत चिकने और मीठे होते हैं।

बारबाडोज सीडलिंग-फलों का भार 145 ग्राम तक होता है और औसत उपज 3.5-5.0 किलोग्राम प्रति पौधा होती है।

शरीफे की बहार

पौधे की रोपाई

शरीफा के पौधे के लिये गर्मी के दिनों में 60 x 60 x 60 सें.मी. आकार के गड्ढे 5 x 5 मी. की दूरी पर तैयार किये जाते हैं। इन गड्ढों को 15 दिन खुला रखने के बाद ऊपरी मृदा में 5-10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 500 ग्राम करंज की खली तथा 50 ग्राम एन.पी.के. मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर भर देना चाहिये। शरीफा लगाने के लिये जुलाई का महीना उपयुक्त रहता है। शरीफा का बीज जमने में काफी समय लगता है। अत: बोने से पहले बीजों को 3-4 दिनों तक पानी में भिगा देने पर जल्दी अंकुरण हो जाता है। इसको लगाने के लिये पॉलीथीन की थैलियों में मिट्टी भरकर बीज लगायें और जब पौधे तैयार हो जायें तब पिंडी सहित तैयार गड्ढे में लगा दें। इसके बाद गड्ढे को अच्छी तरह दबा दें और उसके चारों तरफ थाला बनाकर पानी दें। यदि वर्षा न हो रही हो तो पौधे की 3-4 दिनों पर सिंचाई करने से पौध स्थापना अच्छी होती है। एक हैक्टर में अनुमानित 400 पौधे तक लग सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक

शरीफा के पौधों को खाद उर्वरक की बहुत कम आवश्यकता होती है। अच्छी पैदावार के लिए सड़ी हुई गोबर की खाद और 200 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस एवं 500 ग्राम पोटाश प्रति पौधे की आवश्यकता होती है। खाद की यह मात्रा तीन बार बराबर मात्रा में मार्च-अप्रैल, जुलाई-अगस्त और अक्तूबर महीनों में देनी चाहिए।

पौधों की कांट-छांट

शरीफे के नये पौधों में 3 वर्ष तक उचित ढाँचा देने के लिये कांट-छांट करनी चाहिये। कांट-छांट करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि तने पर 50-60 सें.मी. ऊँचाई तक किसी भी शाखा को नहीं निकलने दें। उसके ऊपर 3-4 अच्छी शाखाओं को चारों तरफ बढ़ने देना चाहिये जिससे पौधा का अच्छा ढांचा तैयार होता है।

पुष्पण एवं फलन

शरीफा में पुष्पण काफी लम्बे समय तक चलता है। उत्तर भारत में मार्च से ही फूल निकलना प्रारंभ हो जाता है और जुलाई तक आता है। पुष्पण के बाद फल पकने तक लगभग 4 महीने का समय लगता है। पके फल सितम्बर-अक्टूबर से मिलना शुरू हो जाते हैं।

शरीफे की तुड़ाई

शरीफा की तुड़ाई फलों पर दो उभारों के बीच रिक्त स्थान बढ़ जाने तथा रंग परिवर्तित होने पर फल पकने की अवस्था में करनी चाहिए। अपरिपक्व फल नहीं तोड़ने चाहिये क्योंकि ये फल ठीक से पकते नहीं और उनसे मिठास की मात्रा भी कम हो जाती है। पौधा लगाने के तीसरे वर्ष से यह फल देना प्रारंभ कर देता है। एक स्वस्थ 4-5 वर्ष पुराने शरीफा के पेड़ से औसत 50-60 फल मिल जाते हैं। सामान्य रूप से पेड़ से फलों को तोड़ने के 6-9 दिनों में पक जाते हैं। इन्हें कृत्रिम रूप से भी पकाया जा सकता है।

प्रसंस्करण

शरीफा के फल से मशीन द्वारा गूदा और बीज को अलग निकाला जाता है। उस निकले हुए गूदे में कड़वाहट ना आये और सुरक्षित रखने के लिए मशीन का उपयोग किया जाता है। इस मशीन से गूदे को एक साल तक सुरक्षित रख कर बाजार में अच्छे भाव पर बेच सकते हैं। इस गूदे का उपयोग आइसक्रीम, रबड़ी और पेय पदार्थ बनाने में किया जाता है।

रोग और कीट

इस पर किसी भी प्रकार के रोग नही आते हैं। लेकिन कभी-कभी पत्तियों को नुकसान पहुँचाने वाले कीट और बग आ जाएं तो दवाई का स्प्रे कर उन्हें नष्ट कर दें। प्रारम्भिक प्रकोप होने पर प्रोफेनाफास-50 या डायमिथोएट-30 की 2 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

उपज एवं लाभ

शरीफा के पौधों में शुरुआत में 50-60 के आसपास फल आते हैं जो समय के साथ बढ़कर 100 तक हो जाते हैं। एक एकड़ में इसके 500 के करीब पौधे लगाए जा सकते हैं, जिनसे शरीफ की सालाना 30-35 क्विंटल के आसपास पैदावार हो जाती है। सामान्यत: बाजार भाव 40 रुपये के आसपास पाया जाता है। एक साल में एक एकड़ से एक लाख से 1.5 लाख तक की कमाई आसानी से हो जाती है। इसके पेड़ को पूर्ण रूप से विकसित होने में 4 से 5 साल का वक्त लगता है। इस अवधि के बीच खाली जगह में कुछ सब्जी फसल, मूली, गाजर, धनिया इत्यादि लगाकर भी अच्छी-खासी अतिरिक्त कमाई की जा सकती है। ■

महिला सशक्तिकरण

कम लागत में मशरूम उत्पादन

रीता मिश्रा* और **वाई. डी. मिश्रा***

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण हेतु मशरूम का उत्पादन दिन-प्रतिदिन प्रचलित हो रहा है। मशरूम की उपयोगिता आय बढ़ाने के साथ-साथ भोजन एवं औषधि दोनों ही रूपों में है। यह पोषण का भरपूर स्रोत है। इसी सन्दर्भ में, कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना द्वारा ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण एवं पोषण हेतु वर्षभर मशरूम उत्पादन तकनीकी का प्रशिक्षण तथा प्रसारण किया गया। इसके लिए समूह बैठकों द्वारा महिलाओं का ध्यान उपरोक्त तकनीक की ओर आकर्षित किया गया।

उत्पादन की दृष्टि से महिलाएं ऑयस्टर/ढींगरी मशरूम, बटन मशरूम, धान का पुआल मशरूम या दूधिया मशरूम का चुनाव कर सकती हैं (सारणी 1)। मशरूम की खेती से महिलाओं को निम्नलिखित लाभ होते हैं -

पोषक आहार

मशरूम उच्च गुणवत्ता के प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण तथा खाद्य रेशों का अच्छा स्रोत है। अन्य सब्जियों की तरह मशरूम में 90 प्रतिशत नमी होती है। मशरूम उच्चस्तरीय गुणवत्ता की प्रोटीन से समृद्ध होता है। इसमें 28-30 प्रतिशत सुलभ प्रोटीन एवं ल्यूसिन तथा ट्रिप्टोफेन नामक दुर्लभ अमीनो अम्ल पाए जाते हैं जो कि अनाजों में नहीं

मशरूम के लाभ

- मशरूम की खेती गेहूँ के भूसे, धान के पुआल, मक्का के सूखे पत्ते, दालों के छिलके, सोयाबीन, मटर तथा सरसों के अवशेषों पर सफलतापूर्वक की जा सकती है।
- मशरूम में विटामिन, प्रोटीन तथा खनिज लवण जैसे पौष्टिक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।
- इसकी उत्पादन इकाई में प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित दोनों प्रकार के पुरुष एवं महिलाओं को रोजगार प्राप्त होता है।
- इसे काफी समय तक विभिन्न रूपों में संचित किया जा सकता है और निर्यात भी किया जाता है।
- यह कृषि और पशुपालन के साथ-साथ आसानी से किया जाने वाला व्यवसाय है जिससे अतिरिक्त आय होती है।
- वर्ष भर सर्दियों या गर्मियों में सही प्रजाति का चुनाव कर मशरूम उगाया जा सकता है।
- मशरूम उत्पादन के पश्चात प्राप्त अवशेष को उच्चस्तरीय पशु आहार के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है और इससे अच्छी कम्पोस्ट भी तैयार की जा सकती है।

*रा.वि.कृ.वि.-कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना (म.प्र.)
निदेशालय विस्तार सेवाएं, रा.वि.कृ.वि.-ग्वालियर (म.प्र.)

होते है। मशरूम में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा 2.98-6.04 प्रतिशत होती है, जो कि स्टार्च के स्थान पर ग्लाइकोजन काइटिन और हेमी सेल्युलोज के रूप में होती है। वसा की मात्रा केवल 0.3 प्रतिशत होती है। परन्तु आवश्यक वसा अम्ल लिनोलिक एसिड भरपूर मात्रा में होता है। मशरूम में कोलेस्ट्रॉल के स्थान पर एग्रोस्टेरोल होता है, जो मानव शरीर द्वारा विटामिन डी में परिवर्तित होता है। रेशों की मात्रा अधिक होती है जिसके कारण पाचन क्रिया संतुलित होती है। मशरूम में कई तरह के विटामिन जैसे बी, सी, डी, तथा के पाए जाते हैं। इसमें पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, लोहा तथा तांबा आदि खनिज भी पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें पर्याप्त मात्रा में फोलिक अम्ल भी पाया जाता है जो कि महिलाओं तथा बालिकाओं के लिए अत्यन्त आवश्यक है। मशरूम में खनिज लवण की मात्रा 8-15 प्रतिशत होती है।

मशरूम संरक्षण

पानी की अधिकता होंने के कारण मशरूम को कमरे के तापमान पर 24 घंटे से अधिक समय तक प्राकृतिक अवस्था में नहीं रखा जा सकता है क्योंकि मशरूम में कुछ अवांछित परिवर्तन होने लगते हैं। जैसे- मशरूम/छत्रक का खुल जाना, मशरूम का काला/भूरा पड़ना/रंग में परिवर्तन होना, मशरूम के भार में कमी आना, दुर्गन्ध आना, गुणवत्ता में कमी आदि। अतः मशरूम का संरक्षण अति आवश्यक है जिससे मशरूम को उसकी प्राकृतिक अवस्था में संरक्षित कर गुणवत्ता अर्थात पोषक एवं औषधीय गुणों के ह्रास को रोका जा सकता है। इससे मशरूम के उपयोगिता समय को बढ़ाकर मशरूम की वर्षभर उपलब्धि सुनिश्चित की जा सकती है।

विपणन तथा भंडारण

मशरूम को तोड़ने के पश्चात् यदि बाजार व्यवस्था उपलब्ध हो, तो 200 ग्राम के पैकेट बनाकर बाजार में ताजा मशरूम भेजने चाहिए। मशरूम को ताजा ही प्रयोग करना ठीक होता है। परन्तु फ्रिज में 5 डिग्री तापमान पर 2-3 दिनों के लिए इसका भंडारण भी किया जा सकता है। यदि ताजे मशरूम का बाजार नहीं मिल पा रहा है तो मशरूम का परिरक्षण एवं मूल्यवर्धन कर बाजार में बिक्री कर सकते हैं। महिलाएं, मशरूम से कई प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन जैसे मशरूम पकौड़ा, मशरूम पनीर, मशरूम अचार, मशरूम पुलाव आदि बना सकती हैं यह स्वाद के साथ-साथ परिवार का स्वास्थ्य बढ़ाने में भी लाभप्रद है।

मशरूम-गोभी-मटर बनाने की विधि

सामग्री	मात्रा
मशरूम	200 ग्राम
मटर दाने	100 ग्राम
फूलगोभी	100 ग्राम
टमाटर	20 ग्राम
अदरक	10 ग्राम
लहसुन	10 ग्राम
प्याज	10 ग्राम
हल्दी	5 ग्राम
लाल मिर्च	05 ग्राम
पिसा धनिया	05 ग्राम
घी/तेल	15 मिली.
हरी मिर्च	10 ग्राम
हरा धनिया	25 ग्राम
नमक	स्वादानुसार

विधि: मशरूम को साफ पानी से धोकर 3-4 भाग में काट लें। मटर के दानों को निकाल लें। फूलगोभी को भी धोकर काट लें। सबसे पहले मशरूम व मटर के दानों को तेल में फ्राई कर लें। अब फूलगोभी को भी अलग से अच्छी तरह से फ्राई कर लें। अब एक अलग कड़ाही में बारीक कटे हुए टमाटर, लहसुन, अदरक व प्याज को फ्राई कर लें व इसमें मसाले डालकर थोड़ी देर भून लें। इसके बाद मसाले में पहले से फ्राई की हुई सभी सब्जियां मिला लें। इसमें लगभग 100 मिली. पानी डालकर 5 से 10 मिनट तक कम आँच में पका लें। ऊपर से बारीक कटा हरा धनिया डालकर परोसें।

मशरूम उत्पादन पश्चात् अवशेष का प्रयोग

मशरूम उत्पादन से होने वाले लाभ के साथ-साथ उत्पादन पश्चात् बचे हुए अवशेष को पोषण वाटिका में खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। यह रासायनिक खाद के विकल्प के रूप में भी उपयोग किया जाता है। मशरूम उत्पादन पश्चात बचे अवशेष को पशुओं के आहार के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। ग्रामीण स्तर पर इस अवशेष का प्रयोग बायोगैस संयत्र में गैस उत्पादन हेतु किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त महिलाएं बचे हुए अवशेष को पाश्चुरीकरण द्वारा दूसरे मशरूम उत्पादन की फसल के लिए प्रयोग कर सकती हैं।

पनपते मशरूम

इस प्रकार मशरूम भूमिहीन किसानों एवं महिलाओं के लिए वरदान है तथा इसके उत्पादन से ग्रामीण महिलाएं अपने खाली समय का सदुपयोग कर घर की आय में वृद्धि कर अपना योगदान दे सकती हैं। मशरूम का उत्पादन ग्रामीण क्षेत्रों में आसानी से किया जा सकता है क्योंकि वहां पोषाधार के लिए कृषि से बचे अनुपयोगी पदार्थ प्रयोग में लाए जा सकते हैं। ग्रामीण महिलाएं मशरूम उत्पादन कर स्वंय का रोजगार स्थापित कर सकती हैं तथा इस कार्य द्वारा लाभ उठा सकती हैं। मशरूम को विभिन्न प्रकार से संचित करके काफी समय तक रखा जा सकता है। डिब्बाबंदी व विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों का निर्यात भी किया जा सकता है। इस प्रकार मशरूम उत्पादन महिलाओं को घर बैठे-बैठे रोजगाार प्रदान करने के साथ-साथ उनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में भी मदद कर सकता है।

सारणी 1: मशरूम उत्पादन हेतु फसल समय व फसल चक्र

मशरूम	फसल समय (दिनों में)	फसल चक्र (दिनों में)
बटन मशरूम	60	90
ऑयस्टर/ढींगरी मशरूम	21	45
दूधिया मशरूम	40	60
पैडीस्ट्रा मशरूम/धान का पुआल मशरूम	15	21

नई तकनीक से खरीफ़ प्याज की खेती

साबळे पी. ए.*, **विजय महाजन**** और **सुषमा साबळे*****

प्याज एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक सब्जी फसल है। प्याज का मूल उत्पत्ति स्थान मध्य एशिया माना जाता है और दुनिया भर में बड़े पैमाने पर इसकी खेती की जाती है। मुख्य रूप से चीन, भारत, नीदरलैंड, पाकिस्तान, बांग्लादेश और ऑस्ट्रेलिया में प्याज की खेती होती है। भारत, प्याज का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। बागवानी सांख्यिकी प्रभाग, कृषि, सहकारिता और किसान कल्याण विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली (मार्च, 2020) की रिपोर्ट के अनुसार, देश का कुल प्याज उत्पादन 228.19 लाख टन है, जिसमें से खरीफ प्याज का हिस्सा 48.41 लाख टन, पिछेती-खरीफ प्याज का 21.50 लाख टन और रबी प्याज का 158.28 लाख टन है।

भारत में महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, राजस्थान, बिहार, गुजरात, आंध्र प्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल एवं उत्तर प्रदेश प्रमुख प्याज उत्पादक राज्य हैं। खरीफ प्याज मुख्य रूप से महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात के साथ मध्य प्रदेश, राजस्थान उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों में नए अपरंपरागत उभरते क्षेत्रों में उगाया जा रहा है। इन राज्यों में देश के कुल प्याज उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत हिस्सा है। देश में 8047 हजार टन उत्पादन और 35.26% हिस्सेदारी के साथ महाराष्ट्र, प्याज का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है। भारत में प्याज का उत्पादन तीन मौसमों यानी खरीफ, पछेती-खरीफ और रबी में किया जाता है। खरीफ मौसम में प्याज फसल का लगभग 21% उत्पादन होता है। खरीफ प्याज को जुलाई-अगस्त के दौरान प्रत्यारोपित किया जाता है और संभवत: अक्टूबर-नवंबर के दौरान कटाई की जाती है। रबी मौसम प्याज की फसल का बड़ा हिस्सा पूरे भारत में भंडारित किया जाता है, जो कि मई-अक्टूबर के दौरान उपलब्ध होता है। देश में सामान्यत: अक्टूबर-दिसंबर के दौरान प्याज की पूर्ति में कमी होती है। खरीफ प्याज फसल देश में उपभोक्ता की मांग को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसलिए, खरीफ प्याज की खेती को लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है जो प्याज की कीमतों को विनियमित करने में भी मदद करेगी।

*सहायक प्राध्यापक (वैज्ञानिक) बागवानी, के.वि.के., सरदार कृषीनगर दांतीवाडा कृषि विश्वविद्यालय साबरकांठा, गुजरात, **प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरूनगर, पुणे, महाराष्ट्र और ***पी.एच.डी. (कृषि विज्ञान), महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, महाराष्ट्र

मृदा आवश्यकता

खरीफ मौसम के प्याज के अच्छे उत्पादन के लिए हल्की, गहरी भुरभुरी मृदा, जिसका पी-एच मान 6.0-7.5 हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। मृदा उच्च कार्बनिक पदार्थयुक्त अत्यधिक उपजाऊ होनी चाहिए। बलुई मृदा में अधिक खाद और लगातार सिंचाई की आवश्यकता होती है। सामान्य तौर पर बलुई दोमट मृदा से दोमट मृदा अधिक उपयुक्त मानी जाती है। प्याज की खेती के लिए अत्यधिक क्षारीय और लवणीय मृदा उपयुक्त नहीं मानी जाती। अच्छी तरह से विघटित जैविक खाद सम्मिश्रण को रोपाई पूर्व देने से मृदा की उर्वरता में सुधार करने के अलावा मृदा की भौतिक स्थितियों और सूक्ष्मजीवों की उपलब्धता में सुधार करने में भी यह मदद करता है। जड़ों के आसपास लगातार पानी ठहराव की स्थिति के प्रति प्याज फसल

बहुत संवेदनशील होती है। इसलिए खेत में जल निकास का उचित प्रबंध होना आवश्यक है।

भीमा राज

यह किस्म भाकृअनुप-प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरुनगर, पुणे, महाराष्ट्र द्वारा विकसित की गई है। यह गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान के लिए खरीफ और पछेती -खरीफ के लिए और दिल्ली, गुजरात, राजस्थान और हरियाणा के लिए रबी के लिए अनुशंसित है।

भीमा रेड

यह किस्म गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और पंजाब के लिए खरीफ और महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश के लिए रबी के लिए अनुशंसित है।

भीमा रेड

भीमा श्वेता

यह सफेद प्याज किस्म भाकृअनुप-प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरुनगर, पुणे, महाराष्ट्र द्वारा विकसित की गई है। यह छत्तीसगढ़, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्य प्रदेश, ओडिशा और तमिलनाडु के लिए खरीफ और आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, दिल्ली, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, उत्तर प्रदेश और पंजाब के लिए रबी के लिए अनुशंसित है।

भीमा श्वेता

भीमा शुभ्रा

यह सफेद किस्म छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा,

भीमा शुभ्रा

राजस्थान और तमिलनाडु के लिए खरीफ मौसम के लिए अनुशंसित है। पछेती -खरीफ के मौसम के दौरान भी इसकी खेती की जा सकती है।

भीमा सफेद

यह सफेद किस्म गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान और तमिलनाडु के लिए खरीफ मौसम के लिए अनुशंसित है।

पूसा रिद्धि

यह किस्म भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, दिल्ली द्वारा विकसित की गई है। यह खरीफ और रबी फसल भंडारण और निर्यात के लिए उपयुक्त है।

पूसा रिद्धि

अर्का कल्याण

यह खरीफ मौसम की पुरानी किस्म भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु द्वारा समूह चयन (vigorous mass selection)- सुधार की प्रजनन विधि से विकसित की गई है।

पौधशाला प्रबंधन

खरीफ मौसम की प्याज की पौधशाला के लिए उत्तम जल निकास एवं उच्च कार्बनिक पदार्थयुक्त, पर्याप्त भूमि ढलान के साथ बलुई दोमट मृदा अधिक लाभकारी होती है। पौधशाला अवस्था के दौरान पानी का ठहराव फफूंद रोगों के संक्रमण का कारण बन सकता है। पौधशाला में प्राय: यह देखा गया है कि पौधगलन (जो विभिन्न फफूंदी जैसे रायजोक्टोनिया, फाइटोप्थोरा, पीथियम अथवा फ्यूजेरियम) से फैलता है, में पौधे जमीन की सतह से गलकर गिरने लगते है। इस प्रकार देखते-देखते 2-3 दिनों में अधिकतर पौधे जड़ों के पास से गलकर जमीन पर गिर जाते हैं और सूख जाते है। पौधशाला की तैयारी के लिए भूमि की गहरी जुताई और आवश्यक दोहन (हरोविंग) करके साफ और स्वच्छ करना चाहिए, इसके अलावा मृदा को भुरभुरी बना लें। इससे खरपतवार नियंत्रण, फफूंद प्रकोप और मिट्टी में पैदा होनेवाले कीट का प्रबंधन करने में मदद होगी। उन क्षेत्रों में जहां पौधशाला बुरी तरह से मिट्टी से पैदा होनेवाले रोगों जैसे कि पदगलन (डैम्पिंग ऑफ) फफूंद रोग आदि की वजह से प्रभावित होती है, ऐसी स्थिति में मृदा सौरीकरण उपचार की आवश्यकता होती है। यह पौधशाला में रोगजनक फफूंद को कम करने का सबसे अच्छा तरीका है

पौधशाला में क्यारियां मौसम के अनुसार बनाई जाती हैं। वर्षा मौसम में उठी हुई क्यारियां तैयार की जानी चाहिए। समतल क्यारियों पर पानी तेजी से एक छोर से दूसरे छोर तक चला जाता है और बीज बह जाने की आशंका होती है। इसके साथ ही भारी मिट्टी में जल जमाव की आशंका होती है। हालांकि, रेतीली मिट्टी में पौधशाला समतल क्यारियों में भी हो सकती है। एक हैक्टर क्षेत्र में प्रत्यारोपण के लिए पौधशाला बनाने के लिए लगभग 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। यदि टपक सिंचाई (ड्रिप) या छिड़काव सिंचाई (स्प्रिंक्लर) प्रणाली का उपयोग करके पौधशाला बनाते हैं, तो लगभग 5-7 कि.ग्रा. / हैक्टर की बीज दर पर्याप्त होती है। बुआई से पहले बीज को थायरम या कैप्टान या कार्बेन्डाजिम 2-3 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। पहले से उपचारित किये हुए पैक बीजों को फिर से उपचार की आवश्यकता नहीं होती है। बीजों को कतार में बोना चाहिए। कतार-कतार लगभग 5-7.5 सें.मी. अंतर होना चाहिए और बीजों को 1-1.5 सें.मी. गहराई तक बोना चाहिए। बीज की बुआई के बाद खाद के बारीक चूर्ण से ढक दें और हल्की सिंचाई करें। क्यारियों में इष्टतम तापमान और नमी बनाए रखने के लिए सूखे पुआल से ढकना चाहिये। छोटे क्षेत्र में पौधशाला हो तो अंकुरण पूरा होने तक आवश्यकतानुसार पानी का कनस्तर (वाटर कैन) इस्तेमाल करके पानी देना चाहिए। बड़े क्षेत्र में पौधशाला में यदि ड्रिप या स्प्रिंक्लर उपलब्ध नहीं है तो नाली सिंचन प्रणाली द्वारा सिंचन करें। इससे उठी हुई क्यारी के

दोनों ओर बनी हुई निकास नालियों में पानी भरकर सिंचाई की जाती है।

बीज अंकुरित होने के लगभग 6-8 दिनों बाद तुरंत ढकी हुई घास-पुआल को हटा दें। यदि इसको हटाने में देरी होगी तो पौध परिणामस्वरूप लंबे और पीलापन लिये तैयार हो सकते हैं। स्वस्थ तंदुरुस्त पौध प्राप्त करने के लिए पौधशाला में समय-समय पर निराई करना बहुत महत्वपूर्ण है। खरीफ मौसम के दौरान यदि पौधशाला की क्यारियों में खरपतवार हैं तो उन्हें हाथ से या खुरपी से हटा दें। प्याज की पौधशाला में खरपतवार प्रकोप को नियंत्रित करने के लिए दो बार खुरपी से निराई करना प्रभावी होती

प्रत्यारोपण के लिए तैयार प्याज की पौध

है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए यह सलाह दी जाती है, कि बीज अंकुरण से पहले पेन्डीमेंथालिन 2 मिली/लीटर पानी की दर से प्रयोग करें और बुआई के 20-25 दिनों बाद खुरपी से निराई करें। नर्सरी को तेज गर्मी और बरसात के मौसम में ग्रीन शेड नेट (2 मीटर ऊंचाई पर) द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए। रोप वाटिका में रोपाई पर विभिन्न कीटों और बीमारियों का प्रकोप हो सकता है। थ्रिप्स, प्याज का एक प्रमुख कीट है। फिप्रोनिल 5 ई.सी. 1 मि.ली. /लीटर पानी या कार्बोसल्फान

प्रमुख किस्में

कीट और रोग प्रकोप तथा लगातार जल भराव क्षेत्र की प्रतिरोधी, आमतौर पर पतले तने (गर्दन) के साथ 90 से 105 दिनों की अवधि वाली किस्म खरीफ मौसम के लिए पसंद की जाती है। खरीफ प्याज की कुछ उपयुक्त किस्में नीचे दी गई हैं।

बसवंत-780

महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, महाराष्ट्र द्वारा खरीफ और पछेती-खरीफ मौसम के लिए यह किस्म विकसित की गई है।

फुले समर्थ

महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी, महाराष्ट्र द्वारा खरीफ और पछेती-खरीफ मौसम के लिए यह किस्म विकसित की गई है।

भीमा डार्क रेड

यह किस्म भाकृअनुप- प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरुनगर, पुणे, महाराष्ट्र द्वारा विकसित की गई है। यह किस्म गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और पंजाब क्षेत्र के लिए खरीफ मौसम के लिए अनुशंसित है।

एग्रीफाउंड डार्क रेड

यह किस्म राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान और विकास फाउंडेशन (एन.एच.आर.डी.एफ) द्वारा विकसित की गई है, जो बहुत पुरानी है। यह पूरे देश में खरीफ लिए अनुशंसित है।

भीमा सुपर

यह किस्म भाकृअनुप- प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरुनगर, पुणे, महाराष्ट्र द्वारा विकसित की गई है। यह किस्म दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, तमिलनाडु, पंजाब और ओडिशा के लिए खरीफ और पछेती-खरीफ लिए अनुशंसित है।

25% ई.सी. 2 मि.ली./ लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव थ्रिप्स को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी है। बरसात के मौसम में कीटनाशक और फफूंदनाशक का छिड़काव करते समय स्टीकर का उपयोग करना अति आवश्यक है। बादलयुक्त मौसम और आर्द्रता की स्थिति के दौरान बैंगनी धब्बा या तनागलन फफूंद रोगों की आशंका अधिक रहती है। इसके प्रबंधन के लिए मैंकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर पानी अथवा हेक्साकोनाजोल फफूंदनाशक 1 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर सकते हैं। अपर्याप्त जल निकास क्षमता स्थिति की वजह से नर्सरी में अंकुर जड़सड़न फफूंद रोग की आशंका होती है। इसके प्रबंधन के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर पंक्तियों के बीच ड्रेंचिंग कर सकते हैं। मेटलैक्सिल 4% + मैंकोजेब 64% 2 ग्राम/लीटर पानी की पंक्तियों के बीच ड्रेंचिंग करने से फफूंद से होने वाले रोगों जैसे कि विल्ट और पदगलन (डैम्पिंग ऑफ) को यह नियंत्रित कर सकता है। लीचिंग के माध्यम से भारी मात्रा में पोषक तत्वों की हानि के कारण पौध पीले रंग की हो सकती हैं। इसलिए बुआई के 20 दिनों के बाद 19:19:19 (एन:पी:के उर्वरक) और सूक्ष्म पोषक तत्व मिश्रण (माइक्रोन्यूट्रिएंट मिश्रण) (जिंक 3%, फेरस 2.5%, मैंगनीज 1%, कॉपर 1% और बोरॉन 0.5%) की सिफारिश दर के अनुसार छिड़काव से मुख्य और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमियों को नियंत्रित कर सकते हैं।

उठी हुई क्यारियों (रेज्ड बेड) पर प्याज पौध प्रत्यारोपण

फेरस (लौह) की कमी

जिंक की कमी

मैंगनीज की कमी

प्रत्यारोपण

खरीफ (बरसात) के मौसम में प्याज का प्रत्यारोपण हमेशा उठी हुई क्यारी (रेज्ड बेड) पर करना चाहिए। लगभग 40-45 दिन की पौध प्रत्यारोपण के लिए उपयुक्त होती है। पौध प्रत्यारोपण के लिए पंक्तियों के बीच की दूरी तथा पौध -पौध की दूरी 15x10 सें.मी. रखनी चाहिए। पौध के तने का व्यास लगभग 0.8-0.9 सें.मी. और पौध की ऊँचाई 20-35 सें.मी. उपयुक्त मानी जाती है। प्रत्यारोपण के समय रोपाई का एक तिहाई शीर्ष भाग काट देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

अच्छी तरह से विघटित गोबर या कम्पोस्ट खाद 25-30 टन प्रति हैक्टर खेत तैयार करते समय मिट्टी में मिला दें। नीम खली 250 किलो प्रति हैक्टर की दर से दे सकते हैं। जैविक उर्वरक (बायोफर्टिलाइजर्स) एजेक्टोबैक्टर 5 किलो, पी.एस.बी. 5 किलो और ट्राइकोडर्मा 1.25 किलो प्रति हैक्टर प्रत्यारोपण के पूर्व जमीन में (बेसल) देना उचित होता है। पानी में घुलनशील जैव उर्वरक टपकन सिंचाई से भी दे सकते हैं। प्याज फसल के लिए गोबर खाद के अलावा रासायनिक उर्वरक के रूप में 50 कि. ग्रा. नाइट्रोजन (यूरिया 109 कि. ग्रा.), 50 कि. ग्रा. फॉस्फोरस (एस. एस. पी. 313 कि. ग्रा.) एवं 50 कि. ग्रा. पोटाश (एम. ओ .पी. 83 कि. ग्रा.) प्रति हैक्टर प्रत्यारोपण के पूर्व दिया जाना चाहिए। शेष नाइट्रोजन 50 कि. ग्रा. (यूरिया 109 कि. ग्रा) प्रति हैक्टर रोपाई के 30 एवं 45 दिन में समान भाग में बांटकर देनी चाहिये। 60 दिनों बाद, नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक का उपयोग नहीं करना चाहिए।

तैयार प्याज की फसल

सुगठित प्याज कंद

पानी में घुलनशील उर्वरक और सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रबंधन

प्रमुख पोषक तत्वों को मिट्टी में देने के अलावा, प्याज फसल की वृद्धि और उपज बढ़ाने के लिए पानी में घुलनशील उर्वरक और सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव कर सकते हैं। प्रत्यारोपण के 30 और 45 दिनों के बाद पानी में घुलनशील एन:पी:के उर्वरक 19:19:19 (0.5-1%) का छिड़काव और प्रत्यारोपण के 60 दिनों के बाद एक पानी में घुलनशील 13:00:45 या 00:00:50 (0.5-1%) का एक छिड़काव करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं। यदि मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है अथवा पौधों में विशेष सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं, तो इसके उपचार के लिए विशेष सूक्ष्म पोषक तत्व दिए जाते हैं।

मृदा परीक्षण के आधार पर प्रत्यारोपण के 30 और 45 दिनों के बाद या जब पौधे में विशेष पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं, तब सूक्ष्म पोषक तत्वों के मिश्रण (जिंक 3%, फेरस 2.5%, मैंगनीज 1%, कॉपर 1% और बोरॉन 0.5%) का सिफारिश की हुई दर के अनुसार अथवा वैज्ञानिकों की सलाह के अनुसार छिड़काव कर सकते हैं।

खरपतवार प्रबंधन

फसल को प्रमुखता से प्रत्यारोपण से 30-45 दिनों तक खरपतवारमुक्त रखना जरूरी होता है। फसल-खरपतवार प्रतियोगिता प्रत्यारोपण से लगभग 45 दिनों तक अधिक दर्ज की जाती है। यदि फसल की निराई अवधि के दौरान श्रमिक की कमी होती है, तो उपज में 45-60% तक कमी हो सकती है। प्याज में खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए प्रत्यारोपण के पहले या प्रत्यारोपण से 8-10 दिनों के अंदर फ्लैट नोजल स्प्रेयर का उपयोग करके खरपतवारनाशक ऑक्सीफ्लोरफेन 23.5% ई. सी. 1.5 मि.ली./लीटर पानी का प्रयोग कर और प्रत्यारोपण से 30 दिनों के बाद खुरपी से एक निराई करने से प्रभावी रूप से प्याज में खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है।

प्रत्यारोपण से 25 दिनों बाद ऑक्सीफ्लोरफेन 23.5% ई. सी. 1 मि.ली./ लीटर पानी और क्यूजोलफॉप इथाईल 5% ई. सी. 1 मि.ली./ लीटर पानी के अनुपात में छिड़काव और प्रत्यारोपण के 45 दिनों बाद खुरपी से एक निराई भी प्रभावी पायी गई है।

खरीफ प्याज कंदों की खुदाई और कटाई

आम तौर पर खरीफ मौसम की प्याज फसल में पत्तियों में गिरावट नहीं देखने को मिलती। इसलिए जब पत्तियों का रंग थोड़ा पीला हो जाता है, पत्तियों के शीर्ष भाग सूखने लगते हैं और कंद पर लाल रंजकता विकसित होती है। तब इस प्रकार के विकसित आकार वाले कंदयुक्त पौधों की खुदाई की जाती है। पत्तियों को पूरी तरह से सूखने के बाद प्याज से 2-2.5 सें.मी. लंबी गर्दन (डंडी) छोड़कर काटना चाहिए। यदि खरीफ मौसम प्याज की खुदाई में देर होने लगेगी तो जोड़ वाले प्याज और मुख्य फसल मे फूल आने (बोल्टिंग) जैसी समस्या देखने को मिल सकती है। खरीफ प्याज फसल में औसतन 10-15 टन / हैक्टर की दर से उपज प्राप्त की जा सकती है। ■

मिल्की मशरूम उत्पादन है लाभकारी व्यवसाय

प्रदीप कुमार* एवं **डी. पी. सिंह****

मिल्की मशरूम का आकार व रूप श्वेत बटन मशरूम से मिलता-जुलता है। श्वेत बटन मशरूम की अपेक्षा मिल्की मशरूम का तना अधिक मांसल, लम्बा व आधार काफी मोटा होता है तथा कैप बहुत ही छोटी तथा जल्दी खुलने वाली होती है। मिल्की मशरूम की टिकाऊ क्षमता (तुड़ाई के बाद भण्डारण करने की अवधि) अधिक होती है।

मिल्की मशरूम की खेती के लिये अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। कवकजाल फैलाव के लिये $25-35^0$ सेल्सियस तथा 80-90 प्रतिशत नमी की जरूरत होती है। केसिंग परत बिछाने से लेकर फसल लेने तक तापमान $30-35^0$ सेल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिशत होनी चाहिए। अधिक तापमान ($30-40^0$ सेल्सियस) होने पर भी मिल्की मशरूम पैदावार देती रहती है।

माध्यम का चुनाव

मिल्की मशरूम को भी विभिन्न कृषि फसलों से प्राप्त अवशेषों पर आसानी से उगाया जा सकता है, जैसे भूसा, पुआल, ज्वार, बाजरा व मक्का की कडवी, गन्ने की खोई आदि। माध्यम नया व सूखा होना चाहिए और बरसात में भीगा न हो। इस प्रकार उपलब्धता के अनुसार कोई एक माध्यम चुन लें। मिल्की मशरूम की खेती के लिये भूसा या पुआल का इस्तेमाल अधिक किया जा रहा है।

*वरिष्ठ विषय वस्तु विशेषज्ञ (फसल सुरक्षा) एवं **वरिष्ठ वैज्ञानिक सह अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, सिद्धार्थनगर, महाराजगंज, (उ.प्र)

माध्यम का उपचार

माध्यम को हानिकारक सूक्ष्मजीवियों से मुक्त करवाने तथा मिल्की मशरूम की वृद्धि हेतु उपयुक्त बनाने के लिये, इसे उपचारित करना आवश्यक होता है।

गर्म पानी उपचार विधि

इस विधि के अनुसार भूसा या धान के पुआल की कुट्टी को टाट के छोटे बोरे में भर इसे साफ पानी में अच्छी प्रकार से कम से कम 6 घण्टे तक डुबोकर रखते हैं ताकि भूसा या पुआल अच्छी तरह से पानी सोख ले। इसके पश्चात इस गीले भूसे से भरे बोरे को उबलते हुए गर्म पानी में 40 मिनट तक डुबोकर रखते हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि भूसा डुबोने के बाद पानी 40 मिनट तक उबलता रहना चाहिए, तभी माध्यम का उपचार सफल हो सकता है। इसके बाद भूसे को गर्म पानी से निकाल कर साफ फर्श पर फैला दें ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाये तथा भूसा ठंडा हो जाये। भूसा डालने से पहले फर्श को धोकर उस पर 2 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल (50 मि.ली./लीटर पानी) का छिड़काव करें। इस समय भूसे में पानी की मात्रा (नमी) 65-70 प्रतिशत होनी चाहिए। इस स्थिति का अंदाजा भूसे को मुठ्ठी में कसकर दबाकर लगाया जा सकता है। दबाने पर यदि भूसे से पानी न निकले और हथेली मामूली सी नम हो जाये तो समझना चाहिये कि भूसे में नमी ठीक है। इस प्रकार उपचारित माध्यम बीजाई के लिये तैयार है।

रासायनिक उपचार विधि

गर्म पानी उपचार विधि को लघु स्तर पर अपनाना उचित है परन्तु बड़े स्तर पर यह अधिक खर्चीली साबित होती है। अत: विकल्प के रूप में रासायनिक विधि को अपनाया जा सकता है। रासायनिक उपचार विधि द्वारा माध्यम को उपचारित करने का तरीका निम्नलिखित है:

(क) किसी सीमेंट के हौद या ड्रम में 90 लीटर पानी लें तथा उसमें 10-12 किलोग्राम भूसा भिगो दें।

(ख) एक बाल्टी में 10 लीटर पानी लें तथा उसमें 7.5 ग्राम बॉविस्टीन व 125 मि.ली. फार्मेलीन मिलायें। इस घोल को ड्रम में भिगोये गये भूसे पर उड़ेल दें तथा ड्रम को पॉलीथीन से ढक्कर उस पर वजन रख दें।

(ग) 12-16 घंटे बाद, ड्रम से भूसे को बाहर निकाल कर साफ फर्श पर फैला दें ताकि भूसे से अतिरिक्त पानी निकल जाये। प्राप्त गीला भूसा बीजाई के लिये तैयार है।

बीजाई किए गए बैग

बीजाई करना

ऊपर बताई गई किसी एक विधि से माध्यम (भूसा या पुआल) को उपचारित कर उसमें 4-5 प्रतिशत (गीले भूसे के वजन के अनुसार) की दर से बीज मिलायें यानी कि एक किलोग्राम गीले भूसे में 40-50 ग्राम बीज मिलाया जाता है। बीजाई की विधि छिटकवां भी हो सकती है या फिर सतह पर भी बीजाई की जा सकती है। सतह में बीजाई करने हेतु पहले पॉलीथीन के बैग (15-16 इंच चौड़ा तथा 20-21 इंच उँचा) में एक परत भूसे की बिछायें फिर उसके ऊपर बीज बिखेर दें। उसके ऊपर से फिर भूसे की परत डालें तथा फिर बीज डालें। दो परतों के बीच का अंतर लगभग 3-4 इंच होना चाहिए। इस प्रकार सतह में बीजाई की जा सकती है। बैग में करीब 4-5 किलोग्राम गीला माध्यम (उपचारित) भरा जाता है। बीजित बैगों को एक अंधेरे कमरे में रख दें तथा लगभग 15-20 दिनों तक 25-35^0 सेल्सियस तापमान तथा 80-90 प्रतिशत नमी बनाये रखें।

केसिंग मिश्रण बनाना व परत बिछाना

बीजाई किये गये बैगों में 15-20 दिनों में बीज भूसे में फैल जाता है तथा भूसे पर सफेद फफूँद दिखाई देती है। ऐसी अवस्था केसिंग परत चढ़ाने के लिये उपयुक्त समझी जाती है। केसिंग मिश्रण, केसिंग करने के एक सप्ताह पहले तैयार करते हैं। केसिंग मिश्रण तैयार करने के लिये 3/4 भाग दोमट मिट्टी व 1/4 भाग बालू मिट्टी को मिलायें। अब इस मिश्रण के वजन का 10 प्रतिशत चाक पाउडर मिलायें तथा मिश्रण को 4 प्रतिशत फार्मेलीन (100 मि0ली0/ लीटर पानी) व 0.1 प्रतिशत बॉविस्टीन के घोल (1 ग्राम/लीटर पानी) से गीला कर ऊपर से पॉलीथीन शीट से आठ दिनों के लिये ढक दें। केसिंग करने के 24 घण्टे पूर्व ही केसिंग मिश्रण से पॉलीथीन हटायें तथा मिश्रण को बेलचे से उलट-पलट दें ताकि फार्मेलीन की गंध निकल जाये। इस प्रकार तैयार केसिंग मिश्रण की 2-3 सें.मी. मोटी परत बीज फैले हुए बैग के मुंह को खोलकर, सतह पर चौरस कर बिछा देते हैं। इस दौरान तापमान 30-35^0 सेल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिशत बनाये रखते हैं। लगभग 10-12 दिनों में कवक जाल (बीज के तंतु) केसिंग मिश्रण में फैल जाता है।

मशरूम कलिकाएं

मिल्की मशरूम खेती की चरणवार तकनीकी

उपयुक्त तापमान व आर्द्रता: 20-30^0 सें. ग्रे. व 70-85%

गेहूँ का भूसा/धान का पुआल (10 किग्रा.)

↓ ← 7 ग्राम बाविस्टीन + 100 मिली. फार्मलीन/100 ली पानी

18-20 घंटे भिगोयें

↓

4-6 घंटे अतिरिक्त पानी निथारें

↓

2% स्पॉन तैयार माध्यम पर मिलायें

↓

5-10 किग्रा. माध्यम पर पॉलीथीन के थैलों में भरें

↓

थैलों को 25 सें. ग्रे. पर फसल कक्ष में रखें

↓ ← 15-20 दिन

पॉलीथीन काटकर थैले निकालें

↓ ← 6-7 दिन

तुडाई

(पैदावार 500-700 ग्राम/किग्रा. सूखा भूसा भार)

फसल प्रबंधन

केसिंग मिश्रण में कवक जाल फैलने के बाद, बैगों पर प्रतिदन पानी का छिड़काव किया जाता है। कमरे में ताजी हवा दी जाती है तथा 30-35^0 सेल्सियस तापमान, व 80-90 प्रतिशत नमी बनाये रखी जाती है। इस प्रकार 3-5 दिनों में मशरूम कलिकायें निकलना प्रारम्भ हो जाती हैं जो लगभग एक सप्ताह में पूर्ण मिल्की मशरूम का रूप ले लेती हैं। मिल्की मशरूम की बढ़वार के लिये भी प्रकाश की आवश्यकता होती है।

तुड़ाई, उपज व आमदनी

मिल्की मशरूम की कैप जब 5-6 सें.मी. मोटी हो जाये तो इसे परिपक्व समझना चाहिये और अंगूठे व उँगली की सहायता से घुमाकर तोड़ लेना चाहिए। तने के निचले भाग को, जिसमें मिट्टी लगी होती है, को काट दिया जाता है और मिल्की मशरूम को पॉलीथीन बैग में, जिसमें 4-5 मि.मी के कम से कम चार छेद हों, पैक कर दिया जाता है। मिल्की मशरूम पैदावार 100 प्रतिशत के करीब होती है यानी 1 किलोग्राम सूखे भूसे/पुआल में 1 किलो ताजा मिल्की मशरूम प्राप्त होती है। इसकी उत्पादन लागत अच्छी पैदावार होने पर करीब रुपये 20-25 प्रति किलोग्राम पड़ती है।

पपीते से बढ़ाएं आमदनी

स्वाति साहा* एवं **जी. के. माहापात्रो****

पपीता उन फलदार फसलों में से एक है, जो कि किसानों की आय बढ़ाने के लिए लगाया जा सकता है। पपीता फलोद्यान में अंतर फसल के रूप में सब्जी फसलों को शामिल करने को उचित ठहराया जा सकता है। अंतर फसल के रूप में बढ़ रही अन्य फसलों में इस प्रारंभिक अवधि का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे किसानों को किसी एकाकी फसल के मामले में लंबी अवधि तक उत्पाद की प्रतीक्षा करने की बजाय समय-समय पर उत्पाद की तुड़ाई करते हुए आमदनी के नियमित स्रोत को पाने में मदद मिलेगी।

भारतीय बागवानी सेक्टर आय सृजन करने वाली एक प्रमुख कृषि गतिविधियों के रूप में उभर कर सामने आया है। इसमें बागवानी फसलों के क्षेत्रफल और उत्पादन दोनों में पर्याप्त बढ़ोतरी के साथ अनेक मूल्यवर्धित कार्यकलाप सन्निहित हैं। अन्य फसलों के मुकाबले में बागवानी फसलों में विभिन्न कृषि जलवायु स्थितियों के तहत भूमि प्रति इकाई क्षेत्रफल से कहीं अधिक उत्पादकता प्रदान करने का वंशानुगत लाभ है इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण इलाकों में कहीं उच्चतर आमदनी और रोजगार सृजन के अवसर मिलते हैं।

*भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे

**सर्वे सं. १२५ए, बाणेर फाटा, आई. टी. आई.रोड, औंध, पुणे-४११००७

अंतर-फसलचक्र क्यों है जरूरी

जब एक अथवा दो फसलों को एक साथ उगाया जाता है, तब प्रत्येक फसल में अधिकतम सहयोग करने में पर्याप्त स्थान होना चाहिए और साथ ही दोनों फसलों के बीच प्रतिस्पर्धा कम होनी चाहिए। इसे निम्नलिखित कारकों नामत: स्थानिक व्यवस्था, पादप सघनता, उगाई गई फसलों की परिपक्वता तारीखें, पादप आर्किटेक्चर द्वारा सम्पन्न किया जाता है। अंतर-फसलचक्र को मूल रूप से जलवायु परिस्थितियों में अनियमित बदलावों के कारण फसल असफलता के विरूद्ध एक बीमा के रूप में आजमाया जाता है। लेकिन, वर्तमान में अंतर-फसलचक्र का उद्देश्य उत्पादन में स्थिरता के अलावा प्रति इकाई क्षेत्रफल में कहीं उच्चतर उत्पादकता लाना है। इस प्रणाली में, संसाधनों का उपयोग प्रभावी रूप में किया जाता है और उत्पादकता को बढ़ाया जाता है।

अंतर-फसलचक्र प्रणाली के उद्देश्य

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पुणे द्वारा यह कार्य किया जा रहा है कि कैसे महाराष्ट्र और साथ ही देश के अन्य भागों में पपीते की खेती करके किसानों की आय को दोगुना किया जाए। अपने भरपूर पोषणिक और औषधीय मूल्य के कारण प्रमुख व्यावसायिक महत्व के साथ पपीता उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण फलदार फसल है। हालांकि, इसकी वास्तविक क्षमता का दोहन अभी भी उन्नत किस्मों की गुणवत्ता रोपण सामग्री की कमी और तुड़ाई से पहले तथा बाद में अधिक नुकसान होने के कारण पूरी तरह से नहीं किया जा सका है। क्षेत्रीय केन्द्र, पुणे द्वारा अच्छे बागवानी गुणों वाले कुछ उन्नत वंशक्रमों की पहचान की गई है। केन्द्र एक अवसर के रूप में इसकी प्रौद्योगिकी के साथ आगे आया है एवं इसके परिणामस्वरूप उत्पादन स्थिति में बदलाव भी आया है तथा आदानों के उपयोग में प्रभावशीलता बढ़ी है। इस संस्थान ने अच्छे बागवानी लक्षणों के साथ कुछ वंशक्रमों की पहचान की है, जो कि पपाया रिंग स्पॉट विषाणु से सहिष्णु हैं।

पपीता उन फसलों में से एक है, जो कि किसानों की आय बढ़ाने के लिए लगाया जा सकता है। इसकी पौष्टिकता के कारण दुनिया भर में इसे उगाया जाता है। पपीता फल विटामिन ए, पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम से भरपूर होता है। यह पाचन को बढ़ावा देने में भी मदद करता है। आजकल पपीते के पत्तों को सबसे ज्यादा डेंगू बीमारी के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है, ताकि रक्त में प्लेटलेट्स की बढ़ोतरी हो।

पपीता फलोद्यान में अंतर-फसलचक्र को अपनाना लाभकारी होता है जब पपीते का पत्ती क्षेत्रफल सूचकांक (LAI) कम होता है तब पपीते की अगेती शाकीय और पछेती फलन अवस्थाओं में यह सीमित होना चाहिए। फल लगने से पहले वाली अवस्थाओं में जब पपीते के पौधे युवा होते हैं, तब गर्मियों में प्याज, फ्रासबीन और लोबिया जैसी कम अवधि वाली अंतर फसलों को और सर्दियों में फूलगोभी, बंदगोभी, मूली और मटर की अंतर फसलों को उगाना लाभदायक होता है और इससे किसानों की आमदनी बढ़ती है। कुछ किसान मृदा के उपजाऊपन में सुधार करने और मृदा को खरपतवारों से मुक्त बनाये रखने

पपीते के साथ मिर्च

पपीते के साथ धनिया

के लिए पपीता फलोद्यान में हरी खाद फसलों को उगाना पसंद करते हैं। पपीता फलोद्यानों में रोपी गई अंतर फसलों के आर्थिक लाभों में शामिल है, जैसे कि अकेले फसलचक्र के मुकाबले में प्रति इकाई क्षेत्रफल से अतिरिक्त आय उत्पन्न करना, असामान्य वर्ष में फसल की असफलता के मामले में बीमा के रूप में कार्य करना, मृदा की उर्वरता को बनाये रखना क्योंकि मृदा की दोनों परतों से पोषक तत्व अपटेक किया जाता है। इसके साथ ही मृदा जल अपवाह को कम करने और खरपतवारों की रोकथाम में भी यह प्रयोग की जाती है। पपीता फलोद्यान में अंतर-फसल के रूप में सब्जी फसलों को शामिल करने को उचित ठहराया जा सकता है। अधिक समय तक उपज देने वाली पपीता फलदार फसल में बहार आने से पहले पोषणिक और आर्थिक कारणों से एक अगेती उपजशील फसल हासिल करने में इस अंतर फसलचक्र प्रणाली के तहत मदद मिलती है।

पपीते में सफल अंतर फसल के लिए कुछ महत्वपूर्ण आवश्यकताएं हैं जैसे कि पपीते में जो अंतर फसल उगायी जाती है उसकी पोषक मांग के समय को इंटरक्रॉपिंग सिस्टम को ओवरलैप नहीं होना चाहिए। अंतर-फसलों के बीच प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा न्यूनतम होनी चाहिए एवं इंटरक्रॉप्स की कटाई, पपीते की घनी कैनोपी अवस्था से पहले होनी चाहिए। इसके साथ ही यह भी ध्यान देना चाहिए कि इंटरक्रॉप्स एवं पपीता के विषाणु आपस में संक्रमित न हों। इसलिए हमें विषाणु प्रतिरोधी किस्में ही लगानी चाहिए। दोगुनी आय प्राप्त करने के लिए, किसान अंतर-फसल के साथ-साथ, पपीते में बाड़ फसल के रूप में अमरूद एवं मोरिंगा/सहजन भी लगा सकते हैं। मोरिंगा की पत्तियों और फली की सब्जी बनती है। इससे किसान बाड़ फसल का भी निरंतर लाभ उठा सकते हैं।

जलवायु एवं मृदा

पपीता, मूलरूप से एक उष्णकटिबंधीय पौधा है, हालांकि यह उष्णकटिबंधीय भागों में उगाया जाता है। कम तापमान और पाला इसकी खेती को अधिक ऊंचाई वाले इलाकों में सीमित करते हैं। रात में अत्यधिक सर्दी पड़ने से इसके फल में परिपक्वता धीमी होती है और सर्दियों के मौसम में खराब गुणवत्ता भी होती है। इसे अर्ध-उष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय जलवायु में उगाया जाता है। इसकी खेती 25 से 35 सेल्सियस तापमान सीमा में की जाती है। अधिक आर्द्रता से फलों की मधुरता प्रभावित होती है। कम तापमान वाली परिस्थिति में भी फल अपनी मधुरता अथवा मिठास को खो देते हैं। फलों के पकने वाले मौसम में गरम और शुष्क जलवायु की जरूरत होती है। एक इकहरा तथा उथली जड़ वाला पौधा होने के कारण यह तेज हवाओं में खड़ा नहीं रह सकता।

पपीते को केवल रेतीली और चिपचिपी अथवा भारी क्ले मृदाओं को छोड़कर अन्य कई प्रकार की मृदाओं में भी उगाया जा सकता है। पपीते की जड़ें जलभराव अथवा खेत में पानी खड़ा रहने के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। यहां तक कि 48 घंटों तक जलभराव होना पौधे के लिए घातक हो सकता है। भारी मृदाओं में, अधिक वर्षा होने पर खेत में पानी इकट्ठा हो जाता है और पाद विगलन तथा जड़ सड़न जैसे रोग होने लगते हैं जिससे बहुत कम समय में ही रोपण को भारी नुकसान हो सकता है। अत: आंशिक रूप से ढ़लानदार भूमि को कहीं अधिक पसंद किया जाता है। जैविक सामग्री में अच्छी जल निकासी होने के कारण इस इलाके की पर्वतीय मृदा सबसे अधिक अच्छी पाई जाती है।

नर्सरी

पपीते को हमेशा से बीजों द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। खेत में पौध रोपण की तय तारीख से दो ढाई माह पहले ही नर्सरी में बुआई कर देनी चाहिए। 22 सेंमी.×15 सेंमी. आकार वाले तथा 150 गेज की मोटाई वाले छिद्रित पॉलिथिन थैलों में बीजाई करना बेहतर रहता है। भारी और मध्यम प्रकृति वाली मृदाओं के मामले में, थैलों में गोबर की खाद, मृदा और रेत का 1:1:1 मिश्रण भरा जाना चाहिए। सरन्ध्रीय मृदा वाले पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए एक भाग मृदा और एक भाग गोबर की खाद का पॉटिंग मिश्रण अनुकूल रहता है। बीजों को 2 ग्राम/किग्रा. की दर पर कैप्टॉन के साथ उपचारित करना चाहिए। पॉलिथिन थैलों में गहराई जो कि एक सेंमी. से अधिक नहीं हो, में चार बीजों को डालना चाहिए। पाइप की मदद से सिंचाई की जा सकती है। वर्षाकाल को छोड़कर प्रत्येक सायंकाल फव्वारे की मदद से हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बीज दो से तीन सप्ताह में अंकुरित हो जाते हैं। एक हैक्टर के कृषि रकबे में रोपाई करने के लिए पौध की पर्याप्त संख्या को तैयार करने हेतु लगभग 250 से 300 ग्राम बीज ही पर्याप्त होते हैं। यूरिया अथवा अमोनियम सल्फेट को शामिल करके थैलों में पौद की शीर्ष ड्रेसिंग करने से बचा जाना चाहिए क्योंकि इससे डैम्पिंग ऑफ रोग और ऊंची और दुबली-पतली पौद के विकास को बढ़ावा मिलता है जो कि रोपाई के लिए कम उपयुक्त होती हैं। नर्सरी में पौध तैयार करने का प्रमुख प्रयोजन रेशायुक्त जड़ों और पत्तियों की बड़ी संख्या वाली स्वस्थ (पौध रोपण अवस्था में 15 से 20 सेंमी. ऊंची) तथा स्टॉकी पौद हासिल करना है। पॉटिंग मिश्रण तैयार करने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली गोबर की खाद का उपयोग करना अच्छा रहता है। रोपाई के लिए पौध लगभग 60 दिनों में तैयार हो जाएगी ।

पौध रोपण

मई महीने के प्रथम भाग में 2 से 2.5 मीटर का फासला बनाये रखते हुए 50 सेंमी. आकार वाले गड्ढे तैयार किए जाते हैं। एक पखवाड़े तक गड्ढ़ों को धूप में रहने दिया जाए और बाद में उनमें मिट्टी की ऊपरी परत के साथ 20 से 25 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 से 1.5 किलोग्राम लकड़ी की राख और 1 किलोग्राम हड्डी का चूरा भर दिया जाए। वर्षा नहीं होने की स्थिति में गमलों में जल डाल दिया जाता है ताकि मिश्रण ठीक तरीके से मिल सके। रोपाई करने से पहले, दीमक के हमले से बचाव के लिए गड्ढ़ों को पुन: तर-बतर किया जाता है। जब पौद 15 से 20 सेंमी. लंबी हो जाती है, तब रेजर

ब्लेड की मदद से थैलों को काट दिया जाता है और पौध को सायंकाल के समय में गड्ढों में रोपा जाता है। प्रत्येक गड्ढे में लगभग 15 सेंमी. ऊपर आमतौर पर तीन पौध की रोपाई की जाती है। पौध रोपण दबाव से तेजी से निपटने के लिए रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई करना जरूरी होता है। भारत के पश्चिमी भाग में, नर्सरी में तैयार की गई पपीता पौध को ऐसे खेत में रोपा जाना चाहिए जहाँ फसल की बढ़वार अवस्था के दौरान एफिड वेक्टर संख्या कम बनी रहे। इससे वायरस संक्रमण के कारण होने वाले नुकसान से बचने में मदद मिलती है। आमतौर पर जून से अक्तूबर के स्थान पर फरवरी के महीने में रोपाई करने पर पौधों पर एफिड के हमले को कम करने में मदद मिलती है।

पपीता पौध की रोपाई करने के तुरन्त बाद तथा पौध जमाव के कुछ दिनों बाद अंतर-फसलचक्र के तहत अल्पावधि वाली फसलों की खेती की जा सकती है। इस संबंध में हमारे केन्द्र पर एक परीक्षण किया गया। आमतौर पर खेत में 40 से 45 दिन पुरानी पपीता पौध को रोपा जाता है। जैसे ही पौध जम जाती हैं और उसमें दो से तीन नई पत्तियां निकल आती हैं, तब मेथी, पालक, धनिया आदि जैसी पत्तीदार सब्जियों अथवा यहां तक कि कद्दू, लौकी, खीरा, चिचिण्डा, स्क्वॉश आदि जैसी खीरावर्गीय फसलों अथवा गेंदा या वार्षिकी गुलदाउदी जैसी पुष्पीय फसलों को पपीता पौधों के समानान्तर बोया जा सकता है। खीरावर्गीय फसलों के बीजों को जहाँ गेंदा जैसी फसलों को रोपा गया था, के निकट सीधे ही बोया जाता है। पपीते की दो कतारों के बीच में पत्तीदार सब्जी फसलों के मामले में पंक्ति में बुआई की जाती है। बुआई अथवा रोपाई के एक तथा डेढ़ महीने बाद

पपीते के साथ गेंदा

पत्तीदार सब्जी फसलों की तुड़ाई की जाती है जबकि खीरावर्गीय और पुष्पीय फसलों में तुड़ाई का कार्य चार से पांच माह बाद किया जा सकता है। सीमा फसल के रूप में सहजन एवं अमरूद से भी किसान प्रति यूनिट क्षेत्र में उपज में वृद्धि कर सकते हैं।

खाद डालना एवं अंतर-संवर्धन कार्य

पपीते के पौधों के पोषण के लिए पौध रोपण से पहली बार पुष्पण होने तक की पांच माह की अवधि महत्वपूर्ण होती है। फूल आने से कुछ ही समय पहले पौधे द्वारा हासिल की गई तना परिधि से ही किसी पौधे में ओज एवं उसकी उत्पादकता का निर्णय होता है। यदि अपर्याप्त पोषण के कारण इस अवधि में पौधा कमजोर बना रहता है तब उसका शेष जीवन इस कमी से प्रभावित ही रहता है। इसलिए फूल आने से पहले एक मजबूत और ओजपूर्ण पौधा निर्माण के लिए तथा साथ ही पौधे की अनुवर्ती बढ़वार और उत्पादकता के लिए उचित मात्रा में थोड़े-थोड़े अन्तराल पर उर्वरकों का प्रयोग करते रहना चाहिए। उर्वरीकरण के समय, मृदा में नमी पर्याप्त मात्रा में बनी रहती है। हल्की खुदाई करके अथवा कुदाल की मदद से सिंचाई वृताकार में अथवा बेसिन में उर्वरकों को अच्छी तरह से मिला लेना चाहिए। फसल की तुड़ाई करने से 6 माह पहले ही उर्वरकों का प्रयोग बंद कर देना चाहिए। पपीते के पौधे बहुत तेजी से बढ़ते हैं और एक वर्ष के समयकाल में ही इसमें फल आ जाते हैं इसलिए किसानों की आय को दोगुना करने हेतु आमतौर पर अंतर-फसलों की खेती की जा सकती है। चूंकि पपीता की फसल में फलों की तुड़ाई करने में लगभग एक वर्ष का समय लगता है, इसलिए अंतर फसल के रूप में बढ़ रही अन्य फसलों में इस प्रारंभिक अवधि का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे किसानों को किसी एकाकी फसल के मामले में लंबी अवधि तक उत्पाद की प्रतीक्षा करने की बजाय समय-समय पर उत्पाद की तुड़ाई करते हुए आमदनी के नियमित स्रोत पाने में मदद मिलेगी। जब कभी आवश्यकता हो तब खरपतवारों को हटाना और साथ ही उथली सतह पर कुदाल चलाने की जरूरत होती है। जैसे ही नर पुष्प की मौजूदगी दिखाई दे, उनमें से अधिकांश को हटा देना चाहिए।

अत्यधिक भीड़-भाड़ से बचने के लिए नियमित रूप से पाक्षिक अन्तराल पर फलों में थिनिंग का कार्य किया जाता है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण, कभी-कभी

अन्य फसल के साथ पपीते की अंतर फसल

फूल अथवा फल पौधे से गिरने लगते हैं। फल पूरी तरह से पकने में लगभग चार से पांच महीने का समय लेते हैं। पेड़ पर पकने वाले फल सबसे अच्छी गुणवत्ता वाले होते हैं और साथ ही भोज्य प्रयोजन के साथ-साथ स्थानीय बाजार के लिए भी उपयुक्त होते हैं। लेकिन दूरवर्ती बाजारों के लिए ठोस फलों की और जब उनका शिखर बिन्दु पीला होने लगता है, तब ही तुड़ाई कर ली जाती है। पेड़ पर फलों को अधिक नहीं पकने देना चाहिए क्योंकि इससे पक्षी इन्हें आसानी से नुकसान पहुंचा सकते हैं। इस क्षेत्र में व्यावसायिक रोपण के अंतर्गत, प्रति वृक्ष 20 से 35 किलोग्राम के औसत भार के साथ प्रति वृक्ष 30 से 50 फल की उपज प्राप्त होती है।

यह फसल भारतीय किसानों के बीच एक पोषण से भरपूर स्रोत के रूप में प्रचलित की जानी चाहिए। इसके अलावा, सब्जी के रूप में भी पीआरएसवी सहिष्णु पीएस वंशक्रमों (पुणे सिलेक्शन-१,२,३ एवं ५) की सिफारिश की जाती है। साथ ही पपीते के खेत में मिश्रित फसलचक्र के तौर पर धनिया, मेथी और ड्रमस्टिक आदि को भी शामिल करने पर किसानों को अतिरिक्त लाभ मिलता है। किसानों को पपीता फलों की तुड़ाई वाली लम्बी अवधि तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। फसलों तथा अन्य उद्यमों की उपज अथवा उत्पादकता में वृद्धि अकेला ऐसा महत्वपूर्ण कारक है जिससे आमदनी बढ़ सकती है। निवल बुआई क्षेत्रफल में वृद्धि करके अथवा फसलचक्र सघनता में वृद्धि करके भी कृषि क्षेत्रफल को और अधिक नहीं बढ़ाया जा सकता, इसलिए उत्पादन को बढ़ाने हेतु उत्पादकता को बढ़ाना ही एकमात्र उपलब्ध तरीका है। ■

बरसाती फूलों से बढ़ाएं गृहवाटिका की सुन्दरता

हीरा लाल अटल* और **एस. के. बैरवा****

फूल, मानव जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। इंसान फूलों के साथ जन्म लेता है और फूलों के साथ जीवन जीता है। इस प्रकार देखें तो इंसान के जीवन में फूलों का काफी अधिक महत्व है। इसलिए फूलों की खेती करना बहुत ही लाभदायक होता है। भारत में कृषि वर्षा पर आधारित है। इसलिए देश में वर्षा आधारित खेती को ज्यादा महत्व दिया जाता है। कई प्रकार के ऐसे फूल हैं जिनको हम वर्षा ऋतु में उगाकर काफी लाभ कमा सकते हैं।

बरसाती फूलों को अपने घर के आसपास बगीचे में लगाकर आसानी से सुन्दरता बढ़ा सकते हैं। बरसाती फूलों को ज्यादा देखरेख व पानी की आवश्यकता नहीं होती है। इस लिए मैदानी भागों में इनका अधिक महत्व पाया जाता है।

वर्षा ऋतु में उगाए जाने वाले मुख्य फूल

बरसाती ऋतु में मुख्य रूप से गेंदा, कॉक्सकॉम्ब, बालसम, गैलार्डिया तथा मोश रोज (बिच्छू बैल) उगाए जाते हैं।

गेंदा

गेंदा मुख्य रूप से मैदानी भागों में उगाया जाने वाला लोकप्रिय फूल है। गेंदे में मुख्य रूप से पीले रंग के फूल आते हैं। गेंदे के फूलों का उपयोग खुले फूल, माला बनाकर, शादी विवाह में आंतरिक सजावट, सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों में बहुतायत में किया जाता है। इसके साथ साथ गेंदे का उपयोग बगीचे में भू दृश्य के लिए भी किया जाता है।

गेंदा

जलवायु एवं मृदा

मुख्य रूप से गेंदे की खेती के लिए शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त रहती है। इसमें फूलों की संख्या तथा फूलों की गुणवत्ता के लिए 14.4–28.6 डिग्री से. तापमान सबसे उपयुक्त रहता है। गेंदे की खेती के लिए बलुई दोमट मिट्टी, जिसका पी एच मान 7 से 7.5 डिग्री से. हो, उपयुक्त रहता है। इसके साथ साथ गेंदे की खेती के लिए मिट्टी में पानी को रोकने की क्षमता भी अच्छी होने से जल भराव की समस्या भी नहीं होनी चाहिए।

बीज की मात्रा एवं बुआई

गेंदे में बीज की मात्रा संकर किस्मों

*बिधान चन्द्र कृषि विश्वविधालय, मोहनपुर, पश्चिम बंगाल एवं **कृषि महाविद्यालय, लालसोट

गेंदे की प्रमुख किस्में

पूसा बसंती, पूसा नारंगी, फायर ग्लो, गोल्डन एज, गोल्डन जुबली, गोल्डन येलो, प्रिमरोज क्लाइमेक्स, रस्टी रेड, येलो पिग्मी, फर्स्ट लेडी, क्लाइमेक्स, इन्का येलो, इन्का गोल्ड, इन्का ऑरेंज आदि।

के लिए 700 से 800 ग्राम तथा अन्य किस्मों के लिए 1 से 1.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर के हिसाब से लेते हैं। गेंदे की बुआई सीधे खेत में न कर के पहले इसकी पौध तैयार की जाती है। पौध तैयार करने के लिए बीज की बुआई मध्य जून तक कर देनी चाहिए। जब पौधों में 3 से 4 पत्तियां आ जाएं तब पौध को खेत में या जिस स्थान पर गेंदे को लगाना है, वहां पर 45x45 या 45x30 सेंमी की दूरी पर स्थातांतरित कर देना चाहिए। पौध की रोपाई मध्य जुलाई तक करना सही होता है

खाद एवं उर्वरक

गेंदे की अच्छी पैदावार एवं अच्छा स्वस्थ फूल प्राप्त करने के लिए पौधों को सही मात्रा में पोषक तत्वों का मिलना जरूरी होता है। इसके लिए गेंदे में 600 किलोग्राम यूरिया, 1000 किलोग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट, 200 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश तथा 15 से 20 टन सड़ी गली गोबर की खाद प्रति हैक्टर की दर से देनी चाहिए।

सिंचाई

गेंदा एक तीव्र गति से वृद्धि करने वाला पुष्पीय पौधा है। वैसे तो बरसात ऋतु में इसको सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। फिर भी यदि जरूरत हो तो 10 से 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

पिंचिंग

जब पौधे 30 से 45 दिन के हो जाएं तब पौधों की बीच की मुख्य शाखा को काट देना चाहिए जिससे पौधे में निकलने वाली अन्य शाखाओं की संख्या में वृद्धि की जा सके और अधिक फूल प्राप्त हो सकें।

खरतपवार नियंत्रण

गेंदे में खरपतवार नियंत्रण के लिए 3 से 4 बार हाथ से खरपतवार को निकाल देना चाहिए।

तुड़ाई

गेंदे में फूल तोड़ने से पहले पानी देना चाहिए जिससे स्वस्थ और ताजे फूल प्राप्त हो सकें। फूल हमेशा ठन्डे मौसम जैसे सुबह या शाम के समय ही तोड़ने चाहिए।

कॉक्सकॉम्ब

कॉक्सकॉम्ब

कॉक्सकॉम्ब एक बरसात ऋतु में उगाया जाने वाला सुन्दर फूलदार पौधा है। कॉक्सकॉम्ब में मुर्गे की कलगी के समान गहरे लाल रंग के फूल आते हैं। कॉक्सकॉम्ब के फूल देखने में काफी सुन्दर लगते हैं, तथा इस को ज्यादा देखरेख की आवश्यकता नहीं होने के कारण यह घर तथा कार्यालय के बाहर तथा घर के बगीचों में बहुतायत से उगाया जाता है।

कॉक्सकॉम्ब को लगाने का समय

कॉक्सकॉम्ब को मुख्य रूप से बरसात तथा ग्रीष्म ऋतु में लगाया जाता है। यदि हम ग्रीष्म ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं, तो हमे इस की बुआई फरवरी-मार्च में कर देनी चाहिए। यदि हम इस को बरसात ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं, तो हमें इस की बुआई मध्य जुलाई तक कर देनी चाहिए।

कॉक्सकॉम्ब को कैसे लगाएं

कॉक्सकॉम्ब को उगाने के लिए इस के बीजों को सीधा गमले या क्यारियों में बोया जाता है। कॉक्सकॉम्ब के बीजों को बोने से पहले मिट्टी को हल्का गीला जरूर कर लेना चाहिए, तथा एक पौधे से दूसरे पौधे के बीच 40 से 60 सेंमी की दूरी रखनी चाहिए। बीज बोने के तुरंत बाद झारे से हल्की सिंचाई जरूर करें।

बालसम

आवश्यक जलवायु एवं मिट्टी

कॉक्सकॉम्ब को सफलतापूर्वक उगाने के लिए ऐसी मृदा होनी चाहिए जिसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा पर्याप्त हो तथा मृदा में हवा का आदान-प्रदान अच्छा होने के साथ साथ मृदा में पानी ठहरने की समस्या नहीं होनी चाहिए। कॉक्सकॉम्ब सामान्य रूप से बरसात एवं गर्मी में उगाया जाता है, इसके लिए साफ दिन तथा 6 से 8 घण्टे सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है। बीजों की बुआई सीधे गमलो में, प्रो-ट्रेज में या सीधे क्यारियों में उगा सकते हैं। कॉक्सकॉम्ब के बीजों को क्यारियों में बोने के लिए एक पौधे से दूसरे पौधे के बीच 40-60 सेंमी की दूरी रखनी चाहिए। इसके अलावा क्यारियों में बीजों को सीधे बिखेर कर भी उगाया जा सकता है, तथा बाद में अतिरिक्त पौधों को बाहर निकाल देना चाहिए

कॉक्सकॉम्ब में फूल आने का समय

बीज बोने के लगभग ढाई महीने बाद कॉक्सकॉम्ब में फूल आने प्रारंभ होते हैं।

बालसम

बालसम सामान्य रूप से सूर्य के प्रकाश में या आंशिक छाया में उगाया जाने वाला एक वार्षिक फूलदार पौधा है। बालसम को उगाने के लिए ज्यादा देखरेख की जरूरत नहीं होती है, इस लिए इसे आसानी से उगाया जा सकता है। बालसम पौधशाला एवं बगीचों में आसानी से मिल जाता है। बालसम को टच-मी-नॉट फूल के नाम से भी जाना जाता है।

लगाने का समय

बालसम को मुख्य रूप से बरसात तथा ग्रीष्म ऋतु में लगाया जाता है। यदि हम ग्रीष्म ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं, तो हमें इस की बुआई जनवरी-फरवरी में कर देनी चाहिए। यदि हम इस को बरसात ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं, तो हमें इस की बुआई मई-जुलाई तक कर देनी चाहिए।

बुआई

बालसम के बीजों को सीधा क्यारियों में ना बोकर पहले इसकी पौध तैयार की जाती है। पौध तैयार करने के लिए हम प्रो-ट्रेज का प्रयोग कर सकते हैं। प्रो-ट्रेज में हम कोको पिट का प्रयोग कर सकते हैं। बीजों की बुआई से पहले ध्यान रहे कि मृदा या कोको पिट को हल्का नम कर लेना चाहिए। बीजों की बुआई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई झारे से करनी चाहिए तथा बीजों को उगने के लिए हल्के छायादार स्थान पर रखना चाहिए।

पौध का स्थानांतरण

जब पौधों में 4-6 पत्तियां आ जाएं तब इनको पौधशाला से दूसरी जगह जहां आप इनको लगाना चाहते हों, वहां लगा देना चाहिए। पौधों को आप जहां लगाना चाहते हो, ध्यान रहे वहां की मृदा कार्बनिक पदार्थ युक्त तथा उपजाऊ होनी चाहिए।

पानी की आवश्यकता

बालसम के पौधों में वृद्धि के दौरान मृदा में आवश्यक रूप से नमी बनी रहनी चाहिए, इसलिए 7 से 8 दिनों में एक बार अच्छे से पानी देना चाहिए।

फूल आने का समय

बुआई के करीब 60 दिन बाद बालसम में फूल आना प्रारंभ होते हैं तथा इसमें ज्यादा से ज्यादा 15 से 20 दिन तक ही फूल खिलते हैं।

गेलार्डिया

गेलार्डिया एक बहुवर्षीय फूलदार पौधा है, जिसमें विभिन्न रंगों के फूल खिलते हैं। इसको ब्लैंकेट फूल या भारतीय ब्लैंकेट फूल के नाम से भी जाना जाता है। इसको मुख्य रूप से गर्मियों तथा बरसात के दिनों में उगाया जाता है।

गेलार्डिया

जलवायु एवं मिट्टी

गेलार्डिया एक ऐसा फूलदार पौधा है जिसको पूर्ण रूप से सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ इसको उगाने के लिए ऐसी मृदा सही रहती है जिसमें पानी का निकास अच्छा हो और जिसका पी. एच 6.1 से 6.5 तक हो। इसकी अच्छी वृद्धि और विकास के लिए चिकनी मिट्टी में नहीं उगाना चाहिए।

बीजों की बुआई

गेलार्डिया के बीजों की सीधी बुआई की जाती है। बीजों की बुआई अच्छे जल निकास वाली भूमि में कर के हल्की मिट्टी से ढक देना चाहिए। पौधे से पौधे तथा कतार से कतार के बीच 30 सेंमी की दूरी रखनी चाहिए। बुआई के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए, तथा बीजों के अंकुरित होने तक पर्याप्त नमी बनाये रखें। पौधे एक बार अच्छे से लग जाने के बाद इनको ज्यादा देखरेख और पानी की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन फिर भी कभी कभी हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

बिच्छू बैल को कैसे उगाएं

बिच्छू बैल को उगाना बेहद ही आसान है। इसको उगाने के लिए मातृ पौधे से 2 से 5 इंच लम्बी टहनी (शाखा) का टुकड़ा लेकर उसको उस जगह लगा दें जहां पर आप इस को लगाना चाहते हों। बिच्छू बैल (मोश रोज) को क्यारियों या गमलों में कहीं भी आसानी से लगाया जा सकता है। मातृ पौधे से अलग किए हुए भाग की नीचे की पत्तियों को हटा कर पत्तियां हटे हुए भाग को मिट्टी में दबा दें, तथा हल्के हाथों से थोड़ी मिट्टी को अच्छे से दबा देना चाहिए जिससे मिट्टी का सम्पर्क पौधे के भाग के साथ सही तरीके से हो सके। मिट्टी में लगाने के बाद झारे से हल्की सिंचाई कर दें जिससे मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रहे।

मोश रोज

बिच्छू बैल या मोश रोज एक ऐसा फूलदार पौधा है जिसको गर्मियों तथा बरसात में आसानी से उगाया जा सकता है। बिच्छू बैल में मुख्य रूप से लाल तथा सफेद रंग के फूल खिलते है। इसके फूल केवल चमकदार धूप में ही खिलते हैं। शाम होने पर इसके फूल मुरझा जाते हैं। यदि दिन के समय भी बादल छाये रहते हैं तो इसके फूल नहीं खिलते है।

जलवायु एवं मिट्टी

बिच्छू बैल को उगाने के लिए ऐसी मृदा की आवश्यकता होती है, जिसमें पानी नहीं ठहरता हो। चिकनी मिट्टी इसके लिए सही नहीं रहती है। इसे उगाने के लिए गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। बिच्छू बैल को पानी और मृदा बचाने के लिए भी सजावट के रूप में उगाया जाता है।

उर्वरक की आवश्यकता

बिच्छू बैल को खाद के रूप में धीरे धीरे पोषक तत्व प्रदान करने वाले उर्वरक एक साल में एक बार या दो बार देने चाहिए।

लगाने का समय

बिच्छू बैल को मुख्य रूप से बरसात तथा ग्रीष्म ऋतु में लगाया जाता है। यदि हम ग्रीष्म ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं, तो हमें इस की बुआई जनवरी-फरवरी में कर देनी चाहिए। यदि हम इस को बरसात ऋतु के लिए लगाना चाहते हैं तो हमें इस की बुआई मई-जुलाई तक कर देनी चाहिए।

फूल आने का समय

मिट्टी में लगाने के बाद लगभग 10 से 14 दिनों बाद पौधे लग जाते हैं। पौध रोपण के लगभग 30 से 40 दिन बाद बिच्छू बैल में फूल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। ■

कमाई

कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती से बढ़ाएं आमदनी

महेश चौधरी*, **अनोप कुमारी**** और **सन्तोष चौधरी*****

ग्रीष्म ऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों में कद्दूवर्गीय फसलों का विशेष स्थान है। इनका उपयोग विभिन्न तरीकों सें, जैसे सलाद (खीरा, ककड़ी), सब्जी बनाने (लौकी, टिंडा, तोरई, करेला, काशीफल, परवल, कद्दू), फल के रूप में (तरबूज, खरबूज), मिठाई बनाने (पेठा, लौकी), अचार (करेला) इत्यादि में किया जाता है। इनमें विटामिन एवं खनिज तत्व भरपूर होते हैं। इसके साथ ही जल की भी पर्याप्त मात्रा होती है जिससे शरीर तरो-ताजा बना रहता है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती आर्थिक दृष्टि से भी खाद्यान्न फसलों की तुलना में लाभप्रद मानी जाती है। किसान इनकी व्यावसायिक खेती करके अच्छा मुनाफा तो कमा ही सकते हैं, साथ ही अन्य फसलों के साथ अंतर्वर्ती फसल के रूप में उगाकर अतिरिक्त आमदनी भी ले सकते हैं। अधिकतर कृषक इनकी खेती जायद एवं वर्षाकालीन मौसम में करते हैं। जिससे बाजार में इन सब्जियों की अप्रैल से नवंबर तक उपलब्धता अधिक रहती है। आवक अधिक होने के कारण किसान को फसल का उचित भाव नहीं मिल पाता है। यदि इनकी खेती बैमोसम में की जाए तो अच्छा भाव मिल सकता है। बेमौसमी उत्पादन के लिए ''दियारा खेती'' (नदी के पेटे में खेती करना) एक पुराना तरीका है परन्तु इसका क्षेत्रफल बहुत सीमित है।

अगेती फसल लेने के लिए कम ऊँचाई वाली संरचना (प्लाटिक लो-टनल) काफी प्रचलन में है। इस तरह की संरचनायें किसानों की आय को दोगुना करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

प्लास्टिक लो-टनल

यह कम ऊंचाई वाली एक अस्थाई संरचना होती है जिसका निर्माण 1-3 माह के लिए खुले खेत में उगाई जाने वाली फसल को कम तापमान/पाले से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए करते हैं। देखने में यह संरचना सुरंग की तरह लगती है इसलिए इसे टनल की संज्ञा दी गई है। अन्य संरचनाओं की अपेक्षा यह काफी कारगर एवं सस्ती होती है। टनल के भीतर का तापमान सामान्य से 6 से 10^0 सेल्सियस तक अधिक रहता है इसमें कम तापमान के बावजूद भी फसलों की बढ़वार होती रहती है साथ ही ठंडी हवा, ओले, वर्षा, पाला इत्यादि से भी सुरक्षा प्रदान करती है। टनल स्थापित करने से पौधों के आसपास के सूक्ष्म वातावरण में भी परिवर्तन आ जाता है। इसमें हरितगृह जैसा ही वातावरण उत्पन्न हो जाता है। टनल में कार्बन डॉइऑक्साइड का संचयकरण अधिक होता है एवं पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया में भी वृद्धि होती है जिससे पैदावार में भी फायदा मिलता है।

अगेती फसल से अच्छा मुनाफा

बेमौसमी सब्जी उत्पादन के लिए बेहतर है लो-टनल तकनीक

लो-टनल हेतु फसल का चुनाव

इसके अंदर कम ऊंचाई वाली सब्जियों को बेमौसम में उगा सकते हैं। इसके साथ ही इसके माध्यम से अगेती पौधों का उत्पादन भी ले सकते हैं। कद्दूवर्गीय सब्जियों की उन्नतशील किस्म, बीज की मात्रा एवं रोपण की दूरी सारणी 1 में दर्शायी गयी है

खेत की तैयारी

सर्वप्रथम खेत की अच्छी तरह जुताई कर लें, जिससें मिट्‌टी भुरभुरी हो जाये। खेत तैयारी के साथ ही मृदा जांच रिपोर्ट के अनुसार गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट एवं रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करें। सामान्यत: कद्दूवर्गीय सब्जियों में 15-20 टन गोबर की खाद, 80 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 50 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। बुआई हेतु खेत में सुविधानुसार नालियां (ट्रेंच) अथवा जमीन सें ऊंची उठी क्यारियां तैयार कर लें। नालियां लगभग 45 सेंमी चौड़ी तथा 30-40 सेंमी गहरी बना लें। लम्बाई आवश्यकतानुसार रख सकते हैं। दो कतारों के मध्य बेल की बढ़वार के अनुसार 1.5 से 4 मीटर तक की

*कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर-शेखावटी, सीकर, 332301, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान; **कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर, 341 506-नागौर, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान; ***कृषि महाविद्यालय, जोधपुर कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर-342304, राजस्थान

सारणी 1. कद्दूवर्गीय सब्जियों की उन्नतशील किस्में, बीज की मात्रा एवं रोपण दूरी

फसल	उन्नत किस्में	बीज की मात्रा (किग्रा/हैक्टर)	दूरी (मीटर)
			कतार x पौधा
करेला	पूसा रसदार, पूसा औषधि, पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, पूसा संकर-1, पूसा संकर-2, काशी उर्वशी, कल्याणपुर बारहमासी, अर्का हरित।	4-5	1.25 x 0.50
कद्दू	पूसा विश्वास, अर्का चंदन, पूसा विकास, पूसा संकर -1, काशी हरित।	4-5	3-4 x 1.25
लौकी	पूसा नवीन, पूसा मंजरी, पूसा मेघदूत, पूसा संदेश, पूसा समर प्रोलिफिक लाँग, अर्का बहार, पूसा सतुंष्टि, पूसा समृद्धि, पूसा संकर-3, काशी गंगा, काशी बहार, नरेन्द्र रश्मि, अर्का बहार।	4-5	2.5-3 x 0.75
तरबूज	शुगर बेबी, आसाही यामाटो, दुर्गापुरा मीठा, दुर्गापुरा केसर, अर्का ज्योति, मधु, अर्का मानिक, अर्का आकाश, अर्का ऐश्वर्य।	4-4.5	2.5 x 1.00
खरबूज	पूसा सरदा, पूसा मधुरस, पूसा शर्बती, हरा मधु, पूसा मधुरिमा, दुर्गापुरा मधु, काशी मधु, अर्का जीत, अर्का राजहंस।	2.0-2.25	2.5 x 1.00
चिकनी तोरई	काशी सौम्या, काशी ज्योति, पूसा सुप्रिया, पूसा स्नेहा, स्वर्ण प्रभा, पूसा चिकनी, काशी दिव्या, पंत चिकनी तोरई-1।	4-5	2.0 x 0.60
धारीदार तोरई	पूसा नसदार, काशी शिवानी, स्वर्ण मंजरी, कल्याणपुर धारीदार, फुले सुजाता, सतपुतिया, पूसा नूतन, काशी खुशी, अर्का सुजात, अर्का सुमित, अर्का प्रसन्न।	4-5	2.0 x 0.60
खीरा	पूसा उदय, पूसा बरखा, पोइनसेट, पूसा संयोग।	2-2.5	1.5 x 0.50
ककड़ी	पूसा उत्कर्ष, अर्का शीतल।	2.00	2.0 x 0.60
टिंडा	पूसा रौनक, बीकानेरी ग्रीन, दिल पंसद, टिंडा लुधियाना, एस. 48, हिसार सलेक्शन 1, अर्का टिंडा।	4-5	2.0 x 0.75

दूरी रखें। नालियां तैयार करने के पश्चात् हल्की सिंचाई कर दें, जिससें बीज अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी का संचरण हो सके। इसके बाद बीजों की बुआई का कार्य आरंभ करें।

लो-टनल स्थापित करने का तरीका

संरचना तैयार करने के लिए 2-3 मिमी. मोटाई के तार या बाँस की फट्टियां या प्लास्टिक पाइप से अर्द्धवृत्ताकार चाप बना लें। तैयार घेरों को क्यारियों के ऊपर सामान्यत: 1.5 से 2 मीटर की दूरी पर लगा दें, इनके मध्य की ऊंचाई 60-90 सेंमी. रखें। टनल हेतु

पाले से बचाव हेतु ढकना भी है फायदेमंद

सावधानियां

- पारदर्शी पॉलिथिन का ही प्रयोग करें जिससें प्रकाश संश्लेषण क्रिया में कोई रुकावट पैदा ना हो।
- फरवरी के दूसरे पखवाड़े में जब तापमान में बढोतरी होने लगे, तब दिन में पॉलिथिन को एक तरफ से हटा दें व रात को पुन: ढक दें।
- जब तापमान फसल के अनुकूल होने लग जाए तब चादर को पूर्णतया हटा दें। परंतु ध्यान रखें कि चादर कभी एकदम ना हटाएं, ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है तथा वे मुरझाने लग जाते हैं। अत: 3-4 दिनों तक हटाते व ढकते रहें जिससें पौध वातावरण के अनुरूप ढल सके।
- इसमें वैसे तो कीट एवं बीमारियों का प्रकोप कम होता है, परंतु अच्छे उत्पादन के लिए आवश्यक है कि समय पर इनकी पहचान करके नियंत्रित करें। रोकथाम हेतु उचित पादप संरक्षण उपाय अपनाएं।

नालियों से पानी की भी होगी बचत

30-50 माइक्रॉन मोटाई तथा 2 मीटर चौड़ाई वाली पारदर्शी पॉलिथिन चादर का प्रयोग करें। चादर से ढकने के बाद पॉलिथिन के सिरों को मिट्टी से दबा दें जिससे रोपित फसल पर एक लघु सुरंग बन जाती है। पाले से बचाव हेतु नालियों के किनारों पर स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सरकंडा अथवा लम्बाई वाली घास का उपयोग भी कर सकते हैं। इसमें बीजों के अंकुरण हेतु उचित गर्मी तो मिलती ही है, साथ ही पौधों की पाले से रक्षा भी हो जाती है।

मखाना से समृद्धता

लोकेन्द्र कुमार*, **मंगल सिंह***, **मनोज कुमार****, **इन्दुशेखर सिंह**** और **भगवती प्रसाद भट्ट****

मखाना (*यूरेल फेरॉक्स सैलिस्ब*) स्वादिष्ट, पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर उपोष्ण जलवायु का एक जलीय पौधा है। इसकी खेती वर्षभर जलमग्न रहने वाले तालाब, गोखुर झील, कीचड़ एवं गड्ढे आदि में की जा सकती है। मखाना को अंग्रेजी में फॉक्स नट एवं गोर्गन नट आदि नामों से जाना जाता है। भारत के पूर्वी क्षेत्रों के मछुआरा समुदाय के लोगों के लिए, जहाँ कृषि बहुत ही कठिन एवं जोखिम भरा कार्य है, गरीब किसानों की जीविकोपार्जन में सहयोग करने की यह काफी क्षमता रखता है। मखाना खेती के तहत क्षेत्र विस्तार एवं वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग करके उत्पादकता एवं उत्पादन में वृद्धि की अपार सम्भावनाएँ हैं जिससे किसानों की आय और आजीविका में सुधार का एक अनूठा अवसर प्राप्त हो सकता है।

भारतवर्ष में मखाना का विस्तार पश्चिम बंगाल, बिहार, मणिपुर, त्रिपुरा, असोम, जम्मू एवं कश्मीर, पूर्वी ओडिशा, मध्यप्रदेश, राजस्थान एवं उत्तर प्रदेश में हुआ है। सदियों से मखाना का उपयोग पारम्परिक रूप से घरों में धार्मिक अनुष्ठानों, उम्दा खाद्य व्यंजनों एवं स्नैक्स के रूप में किया जाता था। कार्बोहाईड्रेट, गुणवत्तायुक्त उच्च प्रोटीन, कैल्शियम, पोटाशियम, फॉस्फोरस एवं मैग्नीशियम से समृद्ध होने के कारण औषधीय प्रयोजनों के लिए इसके उपयोग में तेजी देखी जा रही है।

मखाना की उन्नत प्रजाति

''स्वर्ण वैदेही'' जैसी उन्नत किस्म की उपज क्षमता 2.6-3.0 टन प्रति हैक्टर है। यह पारम्परिक बीजों की तुलना में लगभग 70 प्रतिशत अधिक है।

नर्सरी तैयार करना

मखाना की खेती के लिए कार्बनिक पदार्थ से युक्त चिकनी व चिकनी-दोमट मिट्टी, जिसमें पानी को संग्रहित करने की क्षमता हो, उपयुक्त मानी जाती है। खेत को लेजर लैंड लेवलर से समतल करके चारों ओर लगभग 2 फीट ऊँची मेंड़ बनाकर 2-3 गहरी जुताइयाँ करके अच्छी तरह से तैयार कर लेना चाहिए। नर्सरी के उचित पोषण के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमश: 100:60:40 किलोग्राम/हैक्टर की दर से डालनी चाहिए। खेत तैयार होने के बाद लगभग 1.5 फीट पानी भरकर दिसम्बर महीने में मखाना के लगभग 20 किलोग्राम स्वस्थ बीजों की बीजाई कर देनी चाहिए।

*भाकृअनुप-भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल, **पूर्वोत्तर क्षेत्रों के लिए भाकृअनुप का अनुसंधान परिसर, मखाना अनुसंधान केन्द्र, दरभंगा

मखाना उत्पादन की विधियाँ

तालाब प्रणाली

विश्व के विभिन्न देशों में 'विशेष रूप से भारत में' तालाब प्रणाली विधि मखाना उत्पादकों द्वारा उपयोग की जाने वाली सबसे पुरानी और पारम्परिक विधि है। इस पद्धति के तहत नए जल निकायों में प्रत्यक्ष रूप से 70 किलोग्राम प्रति हैक्टर बीजों की बीजाई की जाती है। पुराने तालाबों के संदर्भ में, जहाँ मखाना की कटाई पहले ही की गई है, उनमें बीज बोने की आवश्यकता नहीं होती है। पुरानी फसल के बचे हुए बीज अगली फसल के लिए रोपण सामग्री के रूप में कार्य करते हैं।

खेत प्रणाली

भाकृअनुप-मखाना अनुसंधान केन्द, दरभंगा द्वारा विकसित की गई खेत प्रणाली मखाना उत्पादन करने की एक आधुनिक प्रणाली है। इस विधि में धान की तरह मखाना के पौधों की नर्सरी तैयार की जाती है। तदोपरान्त, 1 फीट तक पानी से भरी कृषि भूमि पर तैयार पौधों की रोपाई फरवरी के प्रथम सप्ताह से लेकर अप्रैल के तीसरे सप्ताह तक की जा सकती है। यह मुख्यत: खेत एवं नर्सरी में तैयार पौधों की उपलब्धता पर निर्भर करती है। इस विधि द्वारा मखाना का उत्पादन चार महीने में प्राप्त हो जाता है।

एक हैक्टर खेत की बीजाई के लिए लगभग 500 वर्गमीटर क्षेत्र में नर्सरी तैयार करने की आवश्यकता होती है। माहू (एफिड) का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोरोपिड (70 डब्ल्यूएस) की 5 ग्राम मात्रा का एक लीटर पानी में घोल बनाकर या इण्डोसल्फान 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करके प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है।

नर्सरी से रोपाई के लिए पौधे उखाड़ते हुए

रोपाई

स्वस्थ पौधों को नर्सरी से उखाड़ कर खेत में रोपाई कर देनी चाहिए। रोपाई के लिए पौधे से पौधे की दूरी 1.25 मीटर तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.25 मीटर रखनी चाहिए। अच्छा उत्पादन लेने के लिए पौधा रोपाई का कार्य फरवरी के प्रथम सप्ताह से अप्रैल के द्वितीय सप्ताह तक अवश्य ही पूर्ण कर लेना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

अवांछनीय पौधों का प्रकोप फसल की प्रारंभिक अवस्था में प्रायः देखा जाता है, ऐसी स्थिति में समय-समय पर खरपतवारों के पौधों को निकालते रहना चाहिए। पौधा रोपाई के 30-40 दिनों के बाद मखाना के पत्तों की वानस्पतिक वृद्धि काफी तेजी से होने के कारण खरपतवारों की समस्या कम होने लगती है।

सिंचाई प्रबंधन

मखाना एक जलीय पौधा होने के कारण इसको पानी की निरन्तर आवश्यकता होती है। यह ध्यान रहे कि फसल में जल स्तर हमेशा एक फीट से कम नही होना चाहिए। असामान्य वर्षा की स्थिति में फसल को लगभग 4-5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। फिर भी आवश्यकतानुसार पानी की आपूर्ति करनी चाहिए।

फलन एवं कटाई

मखाना में पुष्पण एवं फलन एक सतत प्रक्रिया है। यह मई महीने से शुरू होकर अगस्त-सितम्बर माह तक चलती रहती है। पुष्पण के लगभग 35-40 दिन बाद फल परिपक्व होकर फटने लगते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पानी की ऊपरी सतह पर मखाना के बीज तैरने लगते हैं। 2-3 दिनों के बाद ये बीज तालाब/खेत की निचली सतह पर बैठ जाते हैं। फलों के फटने एवं बीजों के पानी की सतह पर तैरने व नीचे बैठने की प्रक्रिया फसल अवधि तक चलती रहती है। तालाब/खेत की सतह से बीजों के एकत्रीकरण को फसल कटाई कहते हैं। बीजों का एकत्रीकरण प्रातः10 बजे से शाम 3 बजे तक पारम्परिक तरीके से की जाने वाली खेती में किया जाता है। इस कार्य के लिए 4-5 लोगों के समूह की आवश्यकता होती है।

सफाई एवं भण्डारण

एकत्रित किए गए बीज को अर्द्धचन्द्राकार कंटेनर में डाला जाता है जिसे स्थानीय भाषा में गांजा कहते हैं। इसे तालाब में ही बांस के डंडे की सहायता से बाँधकर पानी की सतह पर हिलाने-डुलाने की प्रक्रिया को बार-बार दोहराया जाता है। बीजों के सही से साफ होने तक यह प्रक्रिया चलती रहती है। साफ बीजों को फिर से बेलनाकर कंटेनर, जिसे स्थानीय भाषा में अंकुआ या खंजही कहते हैं, को जमीन की सतह पर बीज के आवरण को रगड़ने के लिए प्रयोग किया जाता है। ऐसा करने से बीज चिकना हो जाता है। मखाना के नट से कीचड़ व अन्य व्यर्थ पदार्थ निकालने के लिए पैरों से रगड़कर अच्छी तरह धोया जाता है। बीज को पूर्ण रूप से साफ करने के बाद उसे जूट की बोरी में रख दिया जाता है।

गांजा से मखाना के बीजों का एकत्रीकरण

उपज

मखाना की खेती आधुनिक खेत प्रणाली विधि से करने पर औसत उपज 2.5 से 3.0 टन/हैक्टर प्राप्त होती है जबकि पारम्परिक तालाब विधि से मखाना की खेती करने पर औसतन उपज 1.4 से 2.2 टन/हैक्टर प्राप्त होती है। ■

खेत में मखाना के पौधों की रोपाई का दृश्य

सफलता गाथा

बैमौसमी मशरूम उत्पादन का बढ़ता प्रचलन

हरीश चन्द्र जोशी*, कमल कुमार पाण्डे, निधि सिंह*** और कृष्ण कान्त मिश्रा******

बागेश्वर जनपद में विगत वर्षो में भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर द्वारा किये गये प्रचार-प्रसार व विभागों के साथ किये गये तालमेल के कारण कृषकों के बीच मशरूम की खेती का प्रचलन बढ़ा है। यहां की जलवायु भी बेमौसमी मशरूम उत्पादन में सहायक सिद्ध हो रही है। एक ओर जहां मैदानी क्षेत्रों में बटन मशरूम का उत्पादन सिर्फ दिसम्बर से फरवरी माह तक किया जाता है, वहीं पर्वतीय क्षेत्रों में इसे जून माह तक पैदा किया जा सकता है इससे किसानों को अच्छी आमदनी प्राप्त होती है। इसके साथ ही जंगली जानवरों व प्रतिकूल मौसम का प्रभाव मशरूम उत्पादन को प्रभावित नहीं करता। कोविड-19 महामारी से उत्पन्न लॉकडाउन में प्रवासियों ने भी मशरूम उत्पादन में रुचि दिखाई है। इसके दृष्टिगत कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा विगत वर्ष कौशल विकास के अंतर्गत मशरूम उत्पादन विषय पर 200 घंटे का प्रशिक्षण आयोजित किया गया। इसमें प्रशिक्षु **श्री भगवत सिंह कोरंगा** ने प्रशिक्षण प्राप्त कर ऑयस्टर और बटन मशरूम की खेती अपने गांव दुलम में शुरू कर अच्छा मुनाफा कमाया। इसके साथ ही वे एक प्रशिक्षक के तौर पर भी जिले में मशरूम के प्रचार-प्रसार को भी गति प्रदान कर रहे हैं। परिणामस्वरूप कई बेरोजगार युवा आज मशरूम उत्पादन के कार्य से जुड़ रहे हैं। आज श्री कोरंगा ने बागेश्वर जिले में ''मशरूम मैन'' के नाम से अपनी पहचान बनाई है।

भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर-बागेश्वर उत्तराखण्ड द्वारा मशरूम की खेती को जनपद में बढ़ावा देने व कृषकों को तकनीकी रूप से प्रशिक्षित करने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर - बागेश्वर द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त एक प्रतिभागी श्री भगवत सिंह कोरंगा जी की एक प्रेरणादायक सफलता की कहानी इस आलेख में प्रस्तुत है। यह बताती है कि कैसे एक प्रशिक्षु ने प्रशिक्षक बनकर अन्य किसानों तक मशरूम उत्पादन की जानकारी पहुंचाई है।

श्री भगवत सिंह, बागेश्वर जिले के कपकोट विकास खण्ड के दुलम ग्राम के 45 वर्षीय कृषक हैं। श्री भगवत पूर्व में विद्या भारती में आचार्य शिक्षक के पद पर सेवायें दे चुके हैं। समाचारपत्रों के माध्यम से उन्हें मशरूम उत्पादन के बारे में जानकारी प्राप्त हुई। वर्ष 2018 में उन्होंने मशरूम प्रशिक्षण केन्द्र, ज्योलीकोट से लघु प्रशिक्षण प्राप्त किया। इसके उपरान्त कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर से ऑयस्टर मशरूम का स्पॉन व तकनीकी मार्गदर्शन हासिल किया। उन्होंने सफलतापूर्वक मशरूम उत्पादन का प्रारम्भिक कार्य किया। वर्ष 2020 में उन्होंने कृषि विज्ञान केन्द्र, बागेश्वर में कौशल भारत कार्यक्रम के अन्तर्गत एग्रीकल्चर स्किल काउन्सिल ऑफ इण्डिया (ASCI) द्वारा आयोजित) 'मशरूम उत्पादक' प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग किया। प्रशिक्षण के ठीक उपरान्त कोविड-19 महामारी के कारण लॉकडाउन लग गया। इसी दौरान कृषि विज्ञान केन्द्र, बागेश्वर ने इन्हें 24 किग्रा. स्पॉन भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा उपलब्ध करवाया। इसमें श्री कोरंगा ने लगभग 130 किग्रा. ऑयस्टर मशरूम उत्पादित किया तथा इसे रु. 200 प्रति किग्रा. की दर से बेचकर रु. 26000.00 की आय अर्जित की। प्रशिक्षण प्राप्त श्री भगवत सिंह ने इसके बाद बटन मशरूम की खेती का कार्य भी कृषि विज्ञान केन्द्र बागेश्वर के मार्गदर्शन में किया जिसमें उन्हें उद्यान विभाग बागेश्वर की योजना के अंतर्गत 50 प्रतिशत अनुदान पर 2 टन पाश्चुरीकृत कम्पोस्ट व स्पॉन उपलब्ध करवाया गया। इसमें भी श्री कोरंगा को अच्छी सफलता मिली और उन्होंने 5 क्विंटल बटन मशरूम उत्पादित कर 86 हजार रुपये का शुद्ध लाभ कमाया। श्री कोरंगा ने अपनी पहचान एक सफल उत्पादक के रूप में जिले में बना

तैयार कम्पोस्ट के गुण

- कम्पोस्ट का रंग गहरा भूरा होना चाहिए।
- कम्पोस्ट भुरभुरी होनी चाहिये।
- कम्पोस्ट में चिपचिपाहट नहीं होनी चाहिए।
- अमोनिया की गंध नहीं आनी चाहिए।
- नमी की मात्रा 68-72 प्रतिशत होनी चाहिए।
- कम्पोस्ट का पी.एच.मान 7.2 से 7.6 के बीच होना चाहिए।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, **प्रभारी अधिकारी, ***कार्यक्रम सहायक, कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर, ****प्रधान वैज्ञानिक- भाकृअनुप-विपकृअनुसं, अल्मोड़ा

ली है तथा उन्हें एन.आर.एल.एम. (राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका सुरक्षा मिशन) के तहत 20 महिला स्वयं सहायता समूहों को प्रशिक्षण की जिम्मेदारी मिली। अब वह प्रशिक्षक के रूप में मशरूम उत्पादन का ग्रामीण स्तर पर प्रशिक्षण दे रहे हैं।

बटन मशरूम की खेती के लिये विशेष प्रकार से बनाई गई खाद की आवश्यकता होती है, जिसे कम्पोस्ट कहते हैं। यह तैयार कम्पोस्ट भाकृअनुप के शोध संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य मशरूम प्रशिक्षण केन्द्रों के साथ-साथ मशरूम के क्षेत्र में कार्य कर रही कुछ निजी इकाइयों के पास भी उपलब्ध रहती है।

बीजाई से पूर्व फसल कक्ष का निर्जीवीकरण 0.2 प्रतिशत फार्मलीन से करें। कम्पोस्ट में स्पॉन मिलाने की प्रक्रिया को स्पॉनिंग (बीजाई) कहते हैं। प्राप्त कम्पोस्ट में तीन से चार दिन के भीतर बीजाई करनी चाहिये। प्रति क्विंटल तैयार कम्पोस्ट में 600 ग्राम से 750 ग्राम स्पॉन (0.6-0.75 प्रतिशत की दर से) सम्पूर्ण बीजाई या मिश्रित बीजाई द्वारा मिलाकर 10-10 किग्रा. के बैग भरकर मशरूम कक्ष में रख दिया जाता है। बीजाई करने के बाद पॉलीथीन के थैलों का मुंह मोड़कर बन्द कर दें। खाद में बीज की बढ़वार (स्पॉन रन) का अवलोकन रोज करना चाहिए। बीज की बढ़वार के समय फसल कक्ष का तापमान 20-22 डिग्री सें.ग्रे. तथा आपेक्षिक आर्द्रता 85 से 90 प्रतिशत बनाये रखना है। बीजाई के छह से सात दिनों के बाद धागेनुमा फफूंद की वृद्धि दिखाई देती है जो 12-16 दिनों में कम्पोस्ट की सतह को सफेद कर देती है। इसके बाद केसिंग की प्रक्रिया की जाती है।

केसिंग (आवरण) मृदा से तात्पर्य है कम्पोस्ट पर फैली हुई फफूंदी के ऊपर मृदा स्तर बिछाना जिससे नमी बनी रहे एवं गैसों के आदान-प्रदान में कवक को सहायता मिले। आवरण मृदा कीट व बीमारियों से मुक्त एवं इसका पी.एच.मान 7.5 से 7.8 होना चाहिए। निम्न विधि से आवरण मृदा बनाई जाती है।

तैयार मशरूम

1. गोबर की खाद (दो साल पुरानी) . बगीचे की मिट्टी (3:1)
2. गोबर की खाद (दो साल पुरानी) . स्पेन्ट कम्पोस्ट (3:1)

आवरण मृदा का पाश्चुरीकरण- आवरण मृदा को फार्मलीन द्वारा शोधित किया जाता है। आवरण मृदा का मिश्रण पक्के फर्श पर ढेर के रूप में रखकर उसमें 4 प्रतिशत फार्मलीन का घोल बनाकर अच्छी तरह मिला लें तथा इसे 72 घण्टे के लिये पॉलीथीन की चादर से ढककर रख देना चाहिए। इसके बाद ढेर की पॉलीथीन चादर को हटाकर आवरण मृदा को उलट-पलट कर फार्मलीन की गंध उड़ाने के लिये छोड़ दिया जाता है। उसके बाद केसिंग मिट्टी 1-1.5 इंच तक बिछाई जाती है।

केसिंग के गुण

- जल ग्राह्य शक्ति कम से कम 60 प्रतिशत होनी चाहिए।
- केसिंग का पी.एच. थोड़ा क्षारीय (7.5-7.8) होना चाहिए।
- केसिंग की बनावट भुरभुरी होनी चाहिए ताकि मिट्टी में पपड़ी न जमने पाये व मशरूम आसानी से निकल सके।

केसिंग के 2 सप्ताह पश्चात मशरूम निकलना प्रारम्भ हो जाता है जो अगले 1 से डेढ़ माह तक निकलता रहता है। मशरूम को ऐंठ कर घुमाकर जड़ से तोड़ा जाता है एवं जड़ में जो खाली स्थान बचता है उसे केसिंग मिट्टी से भर दिया जाता है। इस प्रकार 1 क्विं. कम्पोस्ट से 20 से 25 किग्रा. मशरूम का उत्पादन होता है। तुड़ाई पश्चात मशरूम को 0.01 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट के घोल में 1 मिनट तक धोने से गुणवत्ता एवं भण्डारण अवधि 1 से 1.5 गुना बढ़ जाती है।

ऑयस्टर मशरूम उत्पादन विधिः- ऑयस्टर मशरूम की कवकजाल वृद्धि हेतु 26-28 डिग्री से. व फसल उत्पादन हेतु 22-26 डिग्री से. तापमान तथा 80 से 85 प्रतिशत आर्द्रता की आवश्यकता होती है।

ऑयस्टर मशरूम हमारे खेतों में उगने वाली फसलों के अवशेषों जैसे गेहूं के भूसे, धान का पुआल, मक्के के तने, गन्ने की पत्ती, सोयाबीन एवं दलहनी फसलों के भूसे से तैयार किया जाता है। इसके उत्पादन में किसी भी प्रकार के कम्पोस्ट का इस्तेमाल नहीं किया जाता है केवल लिग्निन व सेल्यूलोजयुक्त कृषि अवशेषों को माध्यम को तैयार करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

माध्यम की तैयारी एवं निर्जीवीकरण

माध्यम बनाने के लिए सर्वप्रथम धान के पुआल या गेहूं के भूसे को 4-5 सेंमी. के टुकड़ों में काटा जाता है। अब कटे भूसे को उपचारित किया जाना आवश्यक है। उपचार के उपरान्त भूसे में उपस्थित हानिकारक सूक्ष्म जीव नष्ट हो जाते हैं। इससे इसमें उगने वाले मशरूम बीमारियों तथा कीटों से सुरक्षित रह सकते हैं। कृषि अवशेषों को उपचारित करने की दो विधियां हैं -

गर्म पानी द्वारा उपचार- गेहूं के भूसे तथा धान के पुआल को बोरे या कट्टों में 18-20 घण्टे भिगोकर रखने के उपरान्त गरम पानी द्वारा उपचारित किया जाता है। इसके लिए इन भीगे कट्टों को 80-90 डिग्री सेंग्रे. गरम पानी में कम से कम 50-60 मिनट तक डुबोकर रखते हैं।

रासायनिक उपचारः- इसके लिये भूसे का कार्बेन्डाजिम और फार्मलीन की

सारणी: पर्वतीय क्षेत्रों हेतु मशरूम उत्पादन का वार्षिक कैलेंडर

क्र. सं	मशरूम एवं प्रजाति	समय	
		घाटी वाले क्षेत्र (1500 मीटर से कम ऊंचाई)	ऊंचाई वाले क्षेत्र (1500 मीटर से अधिक ऊंचाई)
1	श्वेत बटन (*एगेरिकस बाईस्पोरस*)	अक्तूबर से मार्च	अप्रैल से जून
2	ऑयस्टर (*प्लूरोटस सजोर-काजू, प्लूरोटस फ्लोरिडा*)	मार्च से अक्तूबर	मई-जून

निश्चित मात्रा में पानी में मिलाकर भूसे का निर्जीवीकरण किया जाता है। 100 लीटर पानी से भूसा उपचारित करने के लिये 120-150 मि.ली. फार्मलीन व 7-10 ग्राम कार्बेन्डाजिम मिलाकर 10 किग्रा. भूसे के बोरों को 18-20 घंटे तक भिगोते हैं एवं पॉलीथीन शीट से ढक कर रखते हैं ताकि फार्मलीन की गंध उड़ने न पाये। इसके पश्चात् भूसे को पॉलीथीन या ढलान वाले पक्के फर्श पर फैलाकर पानी निथार लेते हैं। इसके बाद गीले भूसे को मुट्ठी में दबाकर जांच कर ली जाती है यदि भूसे से पानी न टपके तो भूसा बीजाई के लिए तैयार है।

बीजाई:- बीजाई के लिये पक्के फर्श या पॉलीथीन शीट का उपयोग किया जाता है। इसके लिए सर्वप्रथम उपयोग होने वाले फर्श या पॉलीथीन शीट को फार्मलीन के 2 प्रतिशत घोल से उपचारित किया जाता है। इसके उपरान्त बीजाई की प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है। एक क्विंटल तैयार भूसे में 2-3 किग्रा. बीज (स्पॉन) प्रयोग किया जाता है। 30 दिनों से अधिक पुराना बीज (स्पॉन) बीजाई के लिये उपयुक्त नहीं होता है। अत: 30 दिनों के भीतर बना हुआ बीज (स्पॉन) ही इस्तेमाल में लाना चाहिए। अब बीजाई किये भूसे को पॉलीथीन के थैलों में दबा-दबा कर भर लेते हैं। तदुपरान्त थैले के मुंह को धागे से बांधकर थैले में चारों तरफ से 10-12 छेद कर देते हैं ताकि गैसों का निकास आसानी से हो सके। अब इन थैलियों को उत्पादन कक्ष में बने रैकों में या कम भार वाले थैलों को निश्चित दूरी पर लटकाकर रख देते हैं। बीजित थैलियों को उत्पादन कक्ष में रखने से 24 घंटे पूर्व फार्मलीन के 2 प्रतिशत घोल से उपचारित कर भली प्रकार बन्द कर देने से हानिकारक जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।

रखरखाव:- ऑयस्टर मशरूम की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये कमरे में स्वच्छ हवा तथा उचित प्रकाश का होना आवश्यक है। कमरे की खिड़कियों में महीन जाली लगी हो ताकि दिन में कुछ समय के लिए खिड़कियां खुली रखी जा सके। कमरे में आवश्यक तापमान तथा 70-80 प्रतिशत नमी में रखी थैलियों में कवकजाल विकसित होने लगता है। लगभग 12-20 दिनों में बीज सम्पूर्ण थैलों में कवकजाल एक सफेद परत के रूप में फैल जाते हैं इसके बाद पॉलीथीन की थैलियों को ब्लेड/चाकू से काटकर अलग कर देते हैं। पॉलीथीन हटाने के बाद आवश्यक नमी बनाये रखने के लिये दिन में दो-तीन बार पानी का छिड़काव करते हैं। इस प्रकार एक सप्ताह के भीतर ही मशरूम निकलने लगते हैं। जब ऑयस्टर मशरूम तोड़ने लायक हो जाएं तब पानी का छिड़काव नहीं करना चाहिए। सदैव ऑयस्टर मशरूम तोड़ने के बाद ही पानी का छिड़काव करें। कमरे में ऑक्सीजन की उचित मात्रा का होना अनिवार्य है। इसके लिए कमरे की खिड़कियां तथा दरवाजे प्रतिदिन दो घण्टे खुले रखने चाहिये जिससे कार्बनडाई ऑक्साइड बाहर निकल जाए तथा ऑक्सीजन की उचित मात्रा कमरे में बनी रहे। यदि ऑयस्टर मशरूम का छत्रक छोटा व डन्ठल बड़ा दिखाई दे तो समझ लेना चाहिये कि कमरे में ऑक्सीजन कम है। ऑक्सीजन के साथ कमरे में प्रकाश की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। प्रकाश मशरूम कलिकाओं के विकास के लिये अति महत्वपूर्ण है। इसलिए दिन में सूर्य के प्रकाश तथा रात्रि के वक्त 4-5 घंटे बल्ब या ट्यूबलाईट जलाकर प्रकाश की व्यवस्था करनी चाहिये।

उगते मशरूम

तुड़ाई व उपज:- जब ऑयस्टर मशरूम की छतरी का किनारा ऊपर या नीचे की ओर मुड़ने लगे तब इसकी तुड़ाई कर लेनी चाहिये। पहली फसल की तुड़ाई के लगभग 12-14 दिनों के बाद दूसरी फसल तुड़ाई के लिये तैयार हो जाती है। ढिंगरी की पैदावार भूसे की गुणवत्ता तथा ढिंगरी की प्रजाति पर निर्भर करती है। इस तरह कुल तीन या चार फसलचक्रों में 10 किग्रा. सूखे भूसे से लगभग 6-7 किग्रा. मशरूम प्राप्त होता है।

भण्डारण:- तुड़ाई के उपरान्त ऑयस्टर मशरूम 24-48 घंटे तक ताजा रहता है। अधिक उत्पादन होने पर इसे धूप में सुखाकर पॉलीथीन बैग में भण्डारित किया जा सकता है। इस प्रकार सुखाने से इसका वजन 10 गुना कम हो जाता है तथा साथ ही इसके बाजार मूल्य में भी दस गुने की वृद्धि हो जाती है। सूखे हुए मशरूम को पीसकर पाउडर बनाकर मशरूम का इस्तेमाल सूप, बिस्कुट, पापड़, बड़ियां बनाने में भी किया जा सकता है। इसका अचार भी बनाया जा सकता है।

प्याज के रोगों का एकीकृत प्रबंधन

आर.सी. गुप्ता* और **पी.के. गुप्ता****

प्याज के रोगों के लिए बहुत से सूक्ष्मजीव जैसे-फफूँद, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि इत्यादि प्रमुख रूप से जिम्मेदार हैं, जिसके कारण उत्पादन, उत्पादकता एवं गुणवत्ता में कमी आती है। प्याज में पौध तैयार करने से लेकर विपणन तक सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले रोग, उत्पादन में मुख्य बाधक हैं। इन रोगों के नियंत्रण हेतु किसान मुख्य रूप से जहरीले रसायनों का ही प्रयोग कर रहे हैं। परिणामत: इनके अधिक एवं लगातार प्रयोग से रोगकारकों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है जिससे पर्यावरण असंतुलन एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए जहरीले रसायनों का प्रयोग कम से कम करते हुए प्याज के प्रमुख रोगों के नियंत्रण के लिए एकीकृत रोग प्रबंधन तकनीक का प्रयोग करना चाहिए।

अधिकांश रोग फफूँदों द्वारा उत्पन्न होते हैं। प्याज में पौधा तैयार करने से लेकर उत्पादन, भण्डारण एवं विपणन तक में सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले रोग मुख्यत: बाधक हैं। इन तथ्यों को ध्यान में रखकर जहरीले रसायनों का प्रयोग कम करते हुए रोगों की रोकथाम हेतु एकीकृत रोग प्रबंधन तकनीक अपनाने की आवश्यकता है। प्याज एवं बीज उत्पादन के समय लगने वाले प्रमुख रोगों एवं उनके प्रबंधन के उपायों का विवरण इस प्रकार है:

*राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान, नासिक-422003, महाराष्ट्र

आर्द्रगलन रोग (डैम्पिंग ऑफ)

पौधशाला में लगने वाले रोगों में आर्द्रगलन प्याज का एक प्रमुख रोग है। नर्सरी में आर्द्रगलन रोग मृदाजनित फफूँदों की विभिन्न प्रजातियों जैसे-पीथियम, राईजोक्टोनिया एवं फ्यूजेरियम से होता है। पौधशाला की क्यारी में मृदा एवं बीजजनित फफूँद, बीजों को अंकुरण पूर्व सड़ाकर नष्ट कर देते हैं। बीज अंकुरण के बाद पौधों में मृदा सतह के पास कोमल भाग पर फफूँदों का संक्रमण होता है, जिससे सफेद, तंतु धागा जैसे दिखाई पड़ते हैं। ऊतकों के मुलायम, सड़ने तथा कमजोर होने के कारण पौधा गिरकर सूख जाता है।

प्रबंधन

- पौधशाला में क्यारियों को जमीन की सतह से 15-20 सेंमी. ऊंची करके बनायें।
- पौधशाला के फव्वारे से हल्की सिंचाई करके मई-जून के महीने में क्यारी को सफेद, पारदर्शी पॉलीथीन (200-250 गेज) से ढ़ककर मृदा का 25-30 दिन तक सौरीकरण करना चाहिए।
- पौधशाला में ट्राइकोडर्मा नामक जैविक फफूँद 10 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से मिलायें।
- बीज का ट्राइकोडर्मा से 5-6 ग्राम/किलोग्राम बीज या कैप्टॉन या थायरम नामक कवकनाशी से 2.5 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।

पौधशाला में आर्द्रगलन रोग के लक्षण

- बीज अंकुरण के बाद कैप्टॉन 0.25 प्रतिशत, कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत, या कॉपर ऑक्सीक्लोराईड 0.3 प्रतिशत के जलीय घोल से 7 दिन के अंतराल पर पौधशाला में ड्रेन्चिंग करें।

बैंगनी धब्बा (पर्पल ब्लाच)

प्याज में इस रोग को बैंगनी धब्बा (पर्पल ब्लाच) कहते हैं जोकि अल्टरनेरिया पोरी नामक फफूँद से होता है। इस रोग के लक्षण में प्याज की पत्तियों तथा बीज फसल की डंठलों पर शुरूआत में सफेद

बैगनी धब्बा रोग का प्याज की पत्तियों पर संक्रमण

भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिनका मध्य भाग बैंगनी रंग का होता है, जब वातावरण का तापक्रम 27-30 से. एवं आर्द्रता 70-90 प्रतिशत होती है।

स्टेम्फीलियम झुलसा (स्टेम्फीलियम ब्लाईट)

प्याज में यह रोग स्टेम्फीलियम वेसीकेरियम द्वारा उत्पन्न होता है। इस रोग में ये धब्बे पत्ती के भीतरी सतह में फैल एवं बीज फसल में डंठलों पर फैल जाते हैं जिससे बीज फसल की डंठलें संक्रमित भाग से मुड़कर लटक जाती हैं। बाद में बीजाणु बनने पर किनारे काले रंग के हो जाते हैं।

स्टेम्फीलियम झुलसा का प्याज की पत्तियों पर संक्रमण

बैंगनी धब्बा एवं स्टेम्फीलियम झुलसा का प्रबंधन

- गर्मी के महीने (मई-जून) में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।
- फफूँदीनाशक क्लोरोथैलोनिल 2.0 ग्रा/लीटर या मैन्कोजेब को 2.5 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।
- एक छिड़काव कॉपर ऑक्सीक्लोराईड का 0.3 प्रतिशत से करना चाहिए।
- आइप्रोडियान 0.25 प्रतिशत, ट्राईफ्लोक्सी टोबिन + टेबुकोनाजोल 0.06 प्रतिशत, या पाइराक्लोस्ट्रोबिन + मेंटिराम 0.3 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें। साथ में ट्राइटोन 0.06 प्रतिशत घोल में अवश्य मिलायें।

सफेद गलन (व्हाईट रॉट)

प्याज में सफेद गलन रोग *स्केलेरोशियम सेपीवोरम/स्केलेरोशियम रोल्फसाई* नामक फफूँद द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण में जमीन के समीप प्याज का ऊपरी भाग गल जाता है। संक्रमित पौधे सूख जाते हैं और कन्द चारों तरफ से सफेद फफूँद से ढ़ककर

सफेद गलन रोग से संक्रमित प्याज कंद

सड़ जाता है। इस रोग से संक्रमित पौधों से बीज के लिए एक भी अम्बेल नही मिल पाता है, अंततः प्रभावित पौध पूर्ण रूप से सूख जाते हैं।

प्रबंधन

- खेत में *ट्राईकोडर्मा हारजिएनम/ट्राइकोडर्मा विरिडी* जैव फफूँदनाशी की 5-6 किग्रा./हैक्टर को गोबर की खाद के साथ मिलायें।
- *स्यूडोमोनास फ्लूओरिसेन्स* 5 किग्रा/हैक्टर की दर से खेत में मिलाना चाहिए।
- रोपाई के पहले प्याज की पौध तथा बीज कन्दों को 0.1 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम के घोल में डुबोकर लगायें।
- कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत के घोल से छिड़काव करें एवं 8 दिनों बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराईड 0.30 प्रतिशत के जलीय घोल से जड़ क्षेत्र में ड्रेंचिंग करना चाहिए।

आधारीय विगलन (बेसल रॉट)

प्याज में यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* फफूँद के कारण होता है। इस रोग के संक्रमण के शुरूआत में पत्तियाँ एवं बीज डंठलें पीली पड़ जाती हैं जो बाद में धीरे-धीरे सूख जाती हैं। इस रोग का मुख्य लक्षण कंदों के निचले आधारीय भाग में सड़न रूप में दिखाई देता है एवं जड़ें हल्की गुलाबी रंग की हो जाती हैं।

प्रबंधन

- प्याज बीज के कंद को कार्बेन्डाजिम से 1.0 ग्राम/लीटर की दर से पानी के घोल से फसल रोपाई या कंद लगाने के पूर्व शोधन करें।
- फसल रोपाई या बल्ब लगाने के पूर्व खेत में *ट्राइकोडर्मा विरिडी, ट्राइकोडर्मा हारजिएनम* की 5-6 किग्रा. मात्रा/हैक्टर गोबर की खाद के साथ मिलानी चाहिए।
- कार्बेन्डाजिम नामक फफूंदीनाशक का 0.1 प्रतिशत की दर से 10 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करें साथ ही साथ ड्रेंचिंग करें।

काली फफूँदी (ब्लैक मोल्ड)

प्याज का यह प्रमुख रोग है जो *एस्परजिलस नाइजर* फफूँद द्वारा प्याज भण्डारण के समय होता है। इस रोग के

ब्लैक मोल्ड से संक्रमित प्याज कंद

कोलेटोट्राईकम झुलसा (*कोलेटोट्राईकम ब्लाइट*)

प्याज में यह रोग *कोलेटोट्राईकम ग्लियोस्पोरायडस* नामक फफूँद से होता है। इस रोग में पौध की पत्तियों पर भूरे-काले धब्बे दिखाई देते हैं एवं ऊपरी मुलायम भाग एवं पुष्प डण्ठल प्रभावित भाग से सूखने लगते हैं। बाद में संक्रमित भागों पर छोटी-छोटी काले रंग की एसरवुलाई बन जाती है।

प्रबंधन

- कार्बेन्डाजिम फफूँदीनाशक द्वारा 2.5 ग्राम/किग्रा बीज की दर से बीज शोधन करना चाहिए।
- कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से जलीय घोल का छिड़काव करना चाहिए।
- एक छिड़काव कॉपर ऑक्सीक्लोराईड का 0.3 प्रतिशत से करना चाहिए।

प्याज की पत्तियों पर कोलेटोट्राईकम झुलसा का संक्रमण

संक्रमण से प्याज में काला चूर्ण, बल्ब की बाहरी सतह पर समूहों में मिलता है। इस फफूँद के बीजाणु बाद में भीतरी शल्कों तक पहुँच जाते हैं और पूरा प्याज सड़ जाता है।

प्रबंधन

- खुदाई के 15 दिनों पहले फसल में कार्बेन्डाजिम का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- भण्डारगृह को प्याज रखने के पहले क्लोरोपाइरीफास व कार्बेन्डाजिम से निर्जमीकृत करना चाहिए।

जीवाणु मृदु विगलन (बैक्टीरियल सॉफ्ट रॉट)

प्याज में यह रोग *इरविनिया कैरोटोवोरा* नामक जीवाणु से होता है। इस रोग के संक्रमण से पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं और ऊपर से नीचे की तरफ सूखने लगती हैं। जीवाणु के अधिक संक्रमण से पौधा एक सप्ताह के अंदर सूख जाता है।

जीवाणु मृदु विगलन से संक्रमित प्याज

प्रबंधन

- रोग के लक्षण दिखाई देने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (एंटीबायोटिक) का 200 पी.पी.एम. (1 ग्रा./5 लीटर) पानी के घोल का छिड़काव करें।

प्याज में जड़ों पर गोल अथवा अण्डाकार गाँठें

आइरिश पीला धब्बा विषाणु

यह एक विषाणु-जनित रोग है यह टोमैटो स्पॉटेड विल्ट वाइरस (टोस्पो वाइरस ग्रुप) द्वारा होता है। यह विषाणु-जनित रोग थ्रिप्स (थ्रिप्स टबैसी) द्वारा फैलता है। भूरे, डायमण्ड अथवा आंख के आकार के धब्बे प्याज के पुष्प डण्ठल पर दिखाई देते हैं। अधिक संक्रमण के कारण पुष्प डण्ठल गिरने लगते हैं।

प्याज के पुष्प डण्ठल में भूरे, डायमण्ड अथवा आँख के आकार के धब्बे

प्रबंधन

- फूल आने के बाद डेल्ट्रामेथ्रिन नामक दवा का शाम के समय 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से फसल में छिड़काव करके इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता है।
- प्रोफेनोफॉस 0.1 प्रतिशत या फिप्रोनिल 0.1 प्रतिशत अथवा रिंप्नोंसैंड 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव से भी नियंत्रित किया जा सकता है। साथ में 0.6 मिली स्टीकर प्रति लीटर पानी की दर से (चिपकाने वाले द्रव) मिलाने चाहिए। सभी कीटनाशकों का छिड़काव फूल आने से पहले करना चाहिए।

प्याज में सूत्रकृमि का संक्रमण

मूलग्रन्थि रोग (रूट नॉट नेमेटोड)

प्याज में यह रोग मेलोइडोगार्डन ग्रामिनिकोला सूत्रकृमि द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण में पौधों का छोटा रह जाना, पत्तियों का पीला होना एवं छोटे कंद बनना मुख्य हैं। मुख्य लक्षण जड़ों का फूल जाना एवं जड़ों पर गोल अथवा अण्डाकार गाँठें बनना है।

प्रबंधन

- पौधा रोपण पूर्व खेत में नीम की खली 5 क्विं./हैक्टर की दर से मिलाना चाहिए।
- प्याज की खेती में अंतरासस्यन के रूप में गेंदे की खेती करें।
- खेत में सूत्रकृमि अण्डा परजीवी फफूँद जैसे पैसिलोमाईसीस लिलासिनस को 5 किग्रा./हैक्टर की दर से मिलायें।
- सूत्रकृमिनाशी कार्बोफ्यूरॉन को 25-30 किग्रा./हैक्टर की दर से खेत में मिलाना चाहिए।

भूरा विगलन (बैक्टीरियल ब्राउन रॉट)

यह स्यूडोमोनास एरूजिनोसा नामक जीवाणु से होने वाला रोग है। प्रारंभ में भीतरी शल्कों में सड़न शुरू होती है, बाद में पूरा प्याज सड़ने से गंध आती है। प्याज को मध्य से काटने पर भीतरी शल्कों में सड़न दिखाई देती है।

प्रबंधन

- खुदाई के 15 दिनों पहले फसल में स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (एन्टीबायोटिक) का 200 पी.पी.एम. (1.0 ग्रा/5 लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु भूरा विगलन से संक्रमित प्याज (प्याज को मध्य से काटने पर भीतरी शल्कों में सड़न)

उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में अनन्नास उत्पादन की बढ़ती संभावनाएं

पी. सी. चौरसिया* और **एस. पी. सिंह****

भारत में कुछ गिने-चुने राज्यों यथा असोम, मेघालय, त्रिपुरा, मणिपुर, पश्चिम बंगाल के अलावा बिहार आदि में कुछ स्थानों पर अनन्नास की खेती की जाती है। छत्तीसगढ़ के उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र एवं मैदानी क्षेत्रों में इसकी खेती की संभवनाएं हैं। इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आलू एवं समशीतोष्ण फल अनुसंधान केन्द्र, मैनपाट में अनन्नास की प्रजातियों का परीक्षण एवं मूल्यांकन किया गया है। इसके परिणाम उत्साहजनक हैं। केन्द्र में अनन्नास की दो प्रजातियों का परीक्षण किया गया है। इनमें क्वीन एवं क्यू दोनों प्रजातियों का परिणाम बहुत अच्छा है। परिणाम के आधार पर इनका विस्तार जिले के अन्य प्रखण्डों में भी सफलतापूर्वक किया जा सकता है

अनन्नास एक व्यावसायिक एवं स्वास्थ्वर्धक, सुपाच्य एवं विटामिनयुक्त ए., बी., सी., कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम एवं लौह युक्त फल है।

जलवायु

अनन्नास की खेती के लिए सर्वोत्तम जलवायु हेतु तापमान 20 डिग्री सें. से 35 डिग्री सें. तक का होना आवश्यक है। दिन और रात के तापमान में कम से कम 4 डिग्री सेल्सियस का अंतर आवश्यक समझा जाता है। इसके साथ-साथ वार्षिक वर्षापात 100 से 150 सेंटीमीटर उपयुक्त माना जाता है।

भूमि का चयन

अनन्नास की खेती के लिए बलुई दोमट मिट्टी जिसका पी.एच 5.0-6.0 हो, उपयुक्त मानी जाती है। इसके अलावा पानी ठहराव की दशा इसकी खेती के लिए उचित नहीं होती है।

प्रजातियाँ

इसकी विभिन्न प्रजातियाँ पायी जाती है जिसमें क्यू, ज्वाइंट क्यू, क्वीन, मॉरीशस, जलधूप, लखत इत्यादि मुख्य हैं। आलू एवं समशीतोष्ण फल अनुसंधान केन्द्र, मैनपाट में मुख्य रूप से क्यू एवं क्वीन प्रजातियों का मूल्यांकन किया गया है।

बीज/पौध

इसका प्रसारण वानस्पतिक रूप से स्लिप तथा अन्तः भूस्तारी द्वारा किया जाता है। अनन्नास की खेती के लिए बीज के रूप में मुख्य रूप से पौधे का साईड पुत्तल (सकर), गुटी पुत्तल (स्लिप) एवं क्राउन का उपयोग होता है।

बीज उपचार

बीजोपचार के लिए मुख्य रूप से कार्बेन्डाजिम घोल 4 ग्राम प्रति लीटर या डाईथेन एम-45, 2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी के घोल का उपयोग किया जाता है।

रोपाई का समय

साल भर उत्पादन के लिए इसकी रोपाई जून-जुलाई और अक्टूबर-नवम्बर में भी की जाती है। इसमें मुख्य रूप से फूल आने का समय जनवरी से मार्च होता है। आलू एवं समशीतोष्ण फल अनुसंधान केन्द्र, मैनपाट में पौध रोपण का उपयुक्त समय फरवरी-मार्च एवं जून-जुलाई है ।

रोपण

बीज का रोपण दोहरी कतार में किया जाता है। जिसमें पौधे से पौधे की दूरी 45 सेंटीमीटर एवं कतार के कतार की दूरी 90 सेंटीमीटर होती है। इसमें 22 सेंटीमीटर गहरा एवं 30 सेंटीमीटर व्यास का गड्ढा किया जाता है। यह सघन बागवानी के लिए एक आदर्श फल है।

पोषण

रोपाई के पूर्व प्रति गड्ढा 1 किलो सड़ा हुआ कम्पोस्ट, 2-3 ग्राम फॉस्फेट एवं 6 ग्राम पोटाश डालकर स्वस्थ स्लिप की रोपाई की जाती है। इसके अलावा रोपाई के समय प्रति पौधा 12-15 ग्राम नाइट्रोजन एवं इतनी ही मात्रा में पोटाश दिया जाता है

*सहायक प्राध्यापक (उद्यानिकी), इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, **कृषि महाविद्यालय एवं अनुसन्धान केन्द्र, महासमुंद (छ.ग.)

अनन्नास पौध रोपण

खरपतवार नियंत्रण

रोपाई के 40-50 दिनों पश्चात प्रथम निराई गुड़ाई 80-90 दिनों के पश्चात, दूसरी 110-120 दिनों के पश्चात, तीसरी 200-210 दिनों के पश्चात, चौथी 300-310 दिनों पश्चात तथा पांचवी व अंतिम निराई कर अनावश्यक खरपतवारों को नियंत्रित किया जाता है।

मल्चिंग या पलवार

काली पालीथीन का उपयोग करके खरपतवार का नियंत्रण एवं उपज की मात्रा को बढाया जा सकता है। इसमें सिंचाई जल की आवश्याकता के अनुसार टपक सिंचाई को भी आसानी से अपनाया जा सकता है।

रासायनिक उर्वरक

प्रथम निराई-गुड़ाई के पश्चात प्रति पौधा 2 ग्राम नाइट्रोजन का उपयोग किया जाता है। दूसरी निराई-गुड़ाई के तुरन्त बाद 2 ग्राम नाइट्रोजन एवं 6 ग्राम पोटाश प्रति पौधा का व्यवहार कर पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दी जाती है। इसके पश्चात दो निराई-गुड़ाई के बाद प्रति पौधा 2.5 ग्राम नाइट्रोजन का उपयोग किया जाता है। सिंचाई जल के साथ उर्वरक का प्रयोग करना काफी लाभदायक होता है।

कीट प्रबंधन

अधिकांशत: अनन्नास की फसलों में कीट का प्रकोप कम देखा गया है फिर भी आवश्यकता अनुसार 2-3 बार सिस्टमेटिक दवा का छिडकाव करते रहना चाहिए। अनन्नास में आमतौर पर मिलीबग एवं स्केल कीट का प्रकोप कभी-कभी देखा गया है।

रोग प्रबंधन

अनन्नास की फसल में स्टेम रॉट रोगों का प्रकोप अधिक पाया जाता है। इसके अलावा और रोग कम लगते हैं। अत: स्टेम रॉट रोग के नियंत्रण के लिए उचित जल निकास एवं पौध रोपण से पहले बोर्डो मिक्चर के घोल में स्लिप को डुबो कर रोपण करना चाहिए।

भण्डारण

कटाई के बाद 10-15 दिनों के लिए मुकुट वाले फलों को नुकसान के बिना रखा जा सकता है। अनन्नास 20 दिनों की अवधि के लिए अच्छी तरह से संग्रहीत किया जा सकता है जब 10-13^0 सेंटीग्रेट पर प्रशीतित किया जाता है।

हार्मोन का व्यवहार

सालभर उत्पादन प्राप्त करने के लिए पौधों में 50 मिलीलीटर कैल्शियम कार्बाइड का घोल प्रति पौधा या 20 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल अथवा 0.25 मिलीलीटर इथरेल प्रति पौधा का छिड़काव किया जाता है। फूल आने के 2 माह बाद एन.ए. ए. और प्लानोफिक्स 200-300 पी.पी.एम. का प्रयोग फल में उत्तम वृद्धि लाता है, जो कि 15-20 प्रतिशत आंका गया है।

फल परिपक्वन अवधि

पौधरोपण के 12 से 15 माह बाद अनन्नास के पौधों में फूल आता है तथा 15 से 18 माह बाद अनन्नास का फल परिपक्व हो जाता है। यह अवधि फल के प्रभेदों पर भी निर्भर करती है।

मिट्टी चढ़ाना

पौधों को मजबूत खड़ा रहने की दृष्टि से समय-समय पर मिट्टी चढ़ा दी जानी चाहिए जिससे पौध सीधा खड़ा रहे। इसके अतिरिक्त जड़ें उथली होने के कारण वर्षा के दौरान पौधे झुके नहीं तथा वृद्धि प्रभावित न हो।

खरपतवार नियंत्रण

अनन्नास की फसल में हाथ से गुड़ाई कर मिट्टी चढ़ाते समय खरपतवार निकाल दिए जाते है, ताकि दोनों कार्य एक साथ हो जाएं।

मल्चिंग

अनन्नास की फसल में मल्चिंग का महत्व स्पष्ट देखा गया है। मल्चिंग के रूप में काली पॉलीथीन एवं लकड़ी के बुरादा का प्रभाव सफेद पॉलीथीन एवं पुआल की मल्चिंग से ज्यादा अच्छा पाया गया है।

अनन्नास फल

सकर्स, स्लिप्स एवं क्राउन को निकालना

शुरुआती दौर में पौधों से सकर्स वृद्धि करते हैं जबकि फलों के विकास के समय स्लिप्स वृद्धि करते हैं। फलों की वृद्धि के समय स्लिप्स के विकास से फलों की परिपक्वता में देरी होती है। इसलिए यथासमय सकर्स एवं स्लिप्स को मुख्य पौधे से हटाते रहना चाहिए।

सिंचाई

वैसे तो अनन्नास की खेती प्राय: असिंचित क्षेत्रों में की जाती है, किन्तु सिंचाई की सुनिश्चित व्यवस्था होने पर फलों का विकास एवं गुणवत्ता में वृद्धि पायी गयी है। टपक सिंचाई एवं स्प्रिंक्लर सिंचाई भी काफी लाभदायक होती है।

फसल तुड़ाई

पौधे रोपने के 12-15 महीने बाद फूल आते हैं और फल के विकास के दौरान इस्तेमाल की जाने वाली प्रचलित सामग्री के साथ पौधे की किस्म, रोपण के समय और प्रकार के आधार पर बोने के 15-18 महीने बाद फल तैयार हो जाते हैं। फल आमतौर पर फूलने के लगभग 5 महीने बाद पकते हैं। कटाई में अनियमित फूल आने का परिणाम लंबी अवधि में फल मिलता है। ■

कैसे हो आम उत्पादकता में वृद्धि

अजय कुमार त्रिवेदी*

राष्ट्रीय स्तर पर आम की उत्पादकता सन 1991-92 में 8.1 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर से सन 2017-18 में बढ़कर 9.7 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर हो गयी। यह प्रगति उन्नत किस्मों के उपयोग, फल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा की नवीन तकनीकों से ही सम्भव हो सकी है। आज भी अधिकांश प्रदेशों में आम की औसत उत्पादकता राष्ट्रीय औसत उत्पादकता (9.66 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर) से कम है।

आम में उत्पादकता वृद्धि हेतु विभिन्न कृषि एवं बागवानी विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों द्वारा सतत प्रयास किये जाते रहे हैं। शोध परिणामों के फलस्वरूप विभिन्न तकनीकें विकसित की गयी हैं। कुछ उपयोगी एवं सुलभ तकनीकी उपायों को अपनाकर उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है जैसे कि:

उन्नत संकर किस्मों का चयन

समय के साथ पुराने बगीचों में लगी किस्मों का क्षरण होता रहता है। इन प्रजातियों के ओजपूर्ण पौधे से मातृवृक्ष बनाकर शाँकुर शाखाओं से पौधे बनाकर नए बगीचे में लगाना चाहिए। इसके साथ ही विभिन्न संस्थानों द्वारा विकसित आम की संकर किस्मों को अपनाने की आवश्यकता है।

पुराना अनुत्पादक आम का पेड़

निराई-गुड़ाई, सिंचाई एवं रख-रखाव

बाग रोपित करने के 2-3 वर्षों तक नवजात पौधों के रख-रखाव, सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई पर विशेष ध्यान देना होता है। आवश्यकतानुसार 15-20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना होता है। फल देने वाले बगीचों में फल लगने के उपरांत 20-25 दिनों के अंतराल पर दो - तीन सिंचाई करना लाभप्रद होता है।

छत्रक प्रबन्धन एवं रखरखाव

छत्रक प्रबंधन हेतु नए बगीचे में पौध रोपण के एक वर्ष बाद पौधों को भूमि की सतह से 60-70 सेंमी की ऊँचाई पर काट देते हैं। उन्हीं स्थानों से तीन-चार कलियों को चारों दिशाओं में प्राथमिक शाखाओं के रूप में विकसित करके इन्हीं पर अगले दो-तीन वर्षों में पौधे का छत्रक ढाँचा तैयार किया जाता है।

मध्यम आयु (20-25 वर्ष) वाले बगीचों में छत्रक के मध्य में स्थित एक, दो या तीन शाखायें या उनके एक भाग का विरलन कर छत्रक के मध्य पर्याप्त रोशनी एवं हवा का आवागमन सुनिश्चित किया जाता है।

अजैविक तथा जैविक तनावों का प्रबंधन

अजैविक तनाव (प्रतिकूल मौसम, सूखा, बाढ़, मृदा लवणता, पाला, गर्मी आदि) पौधों की विभिन्न क्रियायों को प्रभावित करते हैं, जिससे फलों का उत्पादन एवं गुणवत्ता प्रभावित होती है। एक बार पेड़ में अजैविक तनाव के लक्षण दिखाई पड़ जाएं तो वे फल उत्पादकता पर प्रभाव अवश्य छोड़ते हैं, अतः लक्षण दिखाई देते ही संस्तुत प्रबंधन करना चाहिये।

फंगस, जीवाणु एवं कीटजनित व्याधियां आम की उत्पादकता के लिए समस्या हैं। उपयोग की जाने वाली दवाओं के प्रति फंगस, जीवाणुओं एवं कीटों में विकसित होने वाली प्रतिरोधक क्षमता तथा नकली दवाएं इनके प्रबंधन में बड़ी बाधा हैं। अतः किसी भी व्याधि या कीटाणु के लक्षण दिखते ही विश्वसनीय स्रोत से दवा लेकर अविलम्ब प्रबंधन करना चाहिए जिससे इसका प्रभाव कम से कम रहे।

दैहिक विकारों का प्रबंधन

दैहिक विकार नर्सरी से लेकर तुड़ाई उपरांत प्रबंधन तक फल उत्पादन की प्रत्येक अवस्था को प्रभावित करते हैं। अतः गुणवत्तायुक्त फल उत्पादन के लिए दैहिक विकारों का प्रबंधन आवश्यक है। कुछ दैहिक विकार आम उत्पादन के लिए समस्या हैं जैसे कि गुम्मा, अनियमित फलन, फलों का गिरना,

*भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा लखनऊ 226101 (उ.प्र.)

जीर्णोद्धार योग्य घने आम के पेड़

ब्लेक टिप या कोयलिया, झुमका, आंतरिक विगलन आदि। अतः विकार के लक्षण दिखते ही संस्तुत उपाय करने चाहिए। उपाय पेड़ की उम्र, किस्म, मौसम तथा लक्षण दिखाई देने के समय को ध्यान में रखते हुए करने चाहिए।

आम की सघन बागवानी

उत्पादकता बढ़ाने हेतु सघन बागवानी एक महत्वपूर्ण तकनीक है। इस प्रणाली द्वारा भूमि, जल, पोषक तत्वों तथा सौर ऊर्जा का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। परम्परागत रूप से प्रति हैक्टर क्षेत्र में आम के 100 पेड़ (10x10 मी) रोपित किये जाते हैं। सघन बागवानी में प्रति हैक्टर 400 पेड़ (5x5 मी) एवं अति सघन बागवानी में प्रति हैक्टर 1600 पेड़ (2.5x2.5 मी) लगाये जाते हैं। इनसे प्रति इकाई भूमि अधिक उत्पादकता प्राप्त की जा सकती है।

उत्पादकता वृद्धि हेतु अंतरासस्यन

बागों में अंतरासस्यन काफी लाभदायक होता है। पेड़ों में छत्रक प्रबंधन द्वारा बगीचे में प्रकाश की उपलब्धता बढ़ाकर अन्य फसलें जैसे कि जिमीकंद, हल्दी, शतावरी, आदि की खेती की जा सकती है। आम के पौधों के चारों तरफ लगभग दो मीटर दूरी छोड़ कर

पुराने बागों का जीर्णोद्धार

अधिकांश आम के बाग पुराने हैं। पुराने पेड़ों की उत्पादकता एक निश्चित उम्र (लगभग 40-45 वर्ष) के बाद कम होती जाती है इसके कारण पुराने बगीचे लाभप्रद नहीं होते हैं। अतः इस समस्या के निदान हेतु जीर्णोद्धार तकनीक अपना कर पुराने, घने एवं अनुत्पादक बगीचों को पुनः पूर्णरूपेण उत्पादक स्थिति में लाया जा सकता है।

सारणीः औसत आम राष्ट्रीय उत्पादकता से अधिक उत्पादकता वाले प्रदेश (स्रोतः उद्यानिकी सांख्यिकी २०१८)

क्र. सं.	प्रदेश	उत्पादकता (मीट्रिक टन प्रति हैक्टर)
1.	आंध्र प्रदेश	12.05
2.	असोम	10.34
3.	बिहार	16.37
4.	हरियाणा	10.54
5.	मध्य प्रदेश	14.38
6.	पंजाब	16.90
7.	राजस्थान	17.58
8.	उत्तर प्रदेश	17.14
9.	राष्ट्रीय औसत	9.66

आम के बाग में अंतरासस्यन

कम प्रकाश में उगने वाली फसल के पौधे लगाने से उपलब्ध भूमि का उपयोग होने के साथ ही बाग की कुल उत्पादकता बढ़ती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

प्रतिवर्ष पौधों की उम्र के गुणाँक में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश क्रमशः 100, 50, 100 ग्राम प्रति पेड़ की दर से मुख्य तने से 1.5 की दूर नाली में डालना चाहिए। सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग मृदा एवं ऊतक विश्लेषण के आधार पर करना चाहिए। इसके साथ ही 30-35 किग्रा सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाने से मृदा कणों की संरचना में सुधार होता है।

जीर्णोद्धार के बाद आम के पेड़ में फलन

आम प्रवर्धन की उपयोगी तकनीक

व्यावसायिक रूप से आम का प्रवर्धन भेंट कलम व विनीयर कलम बंधन द्वारा किया जाता है। भेंट कलम तकनीक जटिल होने के साथ ही, इस तकनीक द्वारा अधिक संख्या में पौधे तैयार नहीं किये जा सकते हैं। इसीलिए विनीयर कलम तकनीक अधिक उपयोगी होती है। इन दोनों तकनीकों द्वारा पौधे बनाने हेतु जुलाई से सितंबर का समय उपयुक्त पाया गया है। लेकिन संरक्षित घर जैसे कि पॉली हाउस, नेट हाउस एवं फुहार घर में पूरे वर्ष क्लेफ्ट एवं वेज कलम बंधन तकनीक द्वारा पॉलीथीन की थैलियों में पौधे तैयार कर कम समय में अधिक पौधे बनाये जा सकते हैं।

उत्पादकता वृद्धि हेतु सावधानियां

आम का बगीचा लगाने से तुड़ाई उपरांत प्रबंधन तक कुछ सावधानियाँ अपनाना लाभप्रद होता है, जैसे किः

1. बगीचे में पौध रोपण करने के उपरांत पौधे को टूटने से बचाने हेतु बांस के डंडे के माध्यम से इसे सुतली से बांध देना चाहिए।

2. पौध रोपण के समय जमीन की सतह से पौधे के कलम बंधन वाले स्थान को 6-9 इंच ऊपर रखना चाहिए, जिससे पौधा मिट्टी के संपर्क में न आये।

3. फलों के समुचित विकास हेतु फलत वाले पौधों पर सूक्ष्म पोषक तत्वों का 2.0 ग्राम प्रति लीटर की दर से 15-20 दिनों के अंतराल पर दो बार पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।

4. गूदा गलन संबंधी समस्या के नियंत्रण हेतु तुड़ाई से एक माह पूर्व कैल्शियम क्लोराइड (निर्जल) का 2.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से 7-10 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए। ■

पोषण सुरक्षा

खुंभी की लें भरपूर पैदावार

संजीव कुमार गर्ग*, **आकांक्षा पांडेय**** और **राहुल माझी*****

मशरूम एक खाने वाली एक फफूंद है। प्रकृति में मशरूम वर्षा ऋतु में खाद के ढेर, फसल के अवशेषों, पेड़ों के नीचे और चारागाह में स्वत: उगते हैं परंतु उनमें कौन से खाने योग्य है और कौन से जहरीले हैं, यह सामान्य तौर पर पहचानना मुश्किल है। इस कारण से खुंभी की वैज्ञानिक ढंग से खेती आरंभ हुई।

मशरूम की खेती भूमिहीन तथा छोटे किसानों के लिए वरदान स्वरूप है क्योंकि इसकी खेती के लिए अन्य फसलों की तरह भूमि की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी खेती अस्थाई छप्पर बनाकर या कमरे में की जाती है।

महत्व

मशरूम का प्राचीनकाल से खाने के रुप में उपयोग होता रहा है। वर्तमान समय में खुम्भी को एक विशिष्ट पौष्टिक आहार के रूप में जाना जाता है। इसमें प्रोटीन, खनिज लवण तथा विटामिन्स प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

मशरूम से प्राप्त पौष्टिक पदार्थ कई प्रकार की बीमारियों बेरी-बेरी, ह्रदय रोग, हड्डियों को मजबूत बनाने, दांतों के रोग तथा सूखा चर्म रोगों, मधुमेह तथा कैंसर आदि की रोकथाम में सहायक सिद्ध हुए हैं।

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख; **वैज्ञानिक, *** कार्यक्रम सहायक, कृषि विज्ञान केंद्र, गोविंदनगर होशंगाबाद

भारत में बटन (अगेरिकस), ऑयस्टर (प्लूयरोट्स) तथा चाइनीज (वोल्वेरिल्लो) तीनों तरह के मशरूम उगाने के लिए जलवायु उपलब्ध है। बटन मशरूम का उत्पादन ठण्डे दिनों में ही किया जा सकता है। ऑयस्टर मशरूम की खेती 20°C से 30°C मध्य सफलतापूर्वक की जा सकती है।

ऑयस्टर (ढिंगरी) मशरूम के उत्पादन में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। इसकी उत्पादन तकनीक अन्य मशरूम से बहुत सरल है। यह बटन मशरूम के बाद सबसे सर्वाधिक लोकप्रिय मशरूम है।

ऑयस्टर (ढिंगरी) मशरूम की उत्पादन विधि:-

प्रमुख प्रजातियां -

- प्लूयरोटस साजोर काजू
- प्लूयरोटस फ्लोरिडा
- प्लूयरोटस जामोर
- प्लूयरोटस ऑस्ट्रिएटस
- प्लूयरोटस फ्लैब्लेटस

उत्पादन कक्ष- उत्पादन कक्ष दो तरह के हो सकते हैं। एक तो पक्के कमरेवाले, जिनमें बांस या लोहे की एंगल की सहायता से रैक बनायी जाती हैं। दूसरी तरह के उत्पादन कक्ष कच्चे छप्परयुक्त बनाये जाते हैं। इनमें भी रैक बनायी जाती हैं।

ऑयस्टर मशरूम से लाभ

- कृषि उत्पाद के अवशेषों पर आसानी से उगाया जा सकता है।
- अन्य फसलों की तुलना में प्रति इकाई क्षेत्रफल सर्वाधिक पोषक मान पाया जाता है।
- कम लागत में अधिक मुनाफा मिलता है।
- फसलों की तरह भूमि की जरूरत नहीं पड़ती।
- इसमें न्यूनतम पूँजी व समय लगता है।
- अन्य मशरूम की तुलना में अधिक उत्पादन मिलता है।

उत्पादन से पहले की तैयारी - मशरूम उत्पादन शुरु करने से दो दिन पहले उत्पादन कक्ष में 2 प्रतिशत फार्मलीन से छिड़काव करना चाहिए ताकि किसी तरह के हानिकारक जीवाणु कक्ष में ना हों। उत्पादन कक्ष में गंदगी बिल्कुल नहीं होनी चाहिए।

उत्पादन के लिए आवश्यक सामग्री-

1. गेहूं का भूसा -

- भूसा ताजा व साफ होना चाहिए।
- गंदगी युक्त व मिट्टी वाले भूसे में दूसरे जीवाणु एवं फफूंद फैलने का अंदेशा बढ़ जाता है

2. स्पॉन (मशरूम बीज) -

- बीज पर सफेद कवक जाल बढ़वार होनी चाहिए।

उपचारित किया हुआ गेहूं का भूसा

मशरूम उत्पादन प्रशिक्षण

- यदि बीज पर हरी, काली एवं अन्य रंग की फफूंद आ रही हो तो इसका उपयोग नहीं करना चाहिए।
- बीज ज्यादा पुराना नही होना चाहिए अन्यथा उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

3. रसायन- मशरूम उत्पादन के दौरान उत्पादन कक्ष एवं गेहूं के भूसे को निर्जीवीकृत करने के लिए दवाओं की आवश्यकता पड़ती है जो इस प्रकार हैं - फार्मलीन, कार्बन्डेजिम एवं डाइक्लोरोवोस।

भूसे का उपचार- ऑयस्टर मशरूम उत्पादन के लिए उपलब्धता के अनुसार गेहूं या चावल का भूसा काम में लेते हैं। भूसे को उपचारित करने के पश्चात् ही उत्पादन के काम में लेना चाहिए। रासायनिक उपचार के लिए 60 लीटर पानी में (100 लीटर क्षमता वाले प्लास्टिक ड्रम/ सीमेंट की टंकी में 10-12 किलोग्राम सूखा भूसा भरने के बाद 60 लीटर पानी भरा जाता है) 3-5 ग्राम कार्बेन्डेजिम, 150 मिली. फार्मलीन एवं 10-15 मिली. डाइक्लोरोवोस एक बाल्टी पानी में मिलाकर, पानी से भरे ड्रम में भूसा भरने के बाद डालें तथा ड्रम को ढक्कन से बंद कर दें। इस ड्रम में भूसे को 16-18 घण्टे तक भिगोकर रखें। भूसे का उपचार उसमें उपस्थित अन्य जीवाणु जैसे फफूंद, बैक्टीरिया तथा कीड़ों को खत्म करने के लिए किया जाता है तथा भूसे द्वारा पानी सोखने से उसमें उपलब्ध पोषक तत्व आसानी से मिल जाते हैं।

ऑयस्टर मशरूम

थैलियों में बीज मिलाना- भूसे को 16-18 घण्टे पानी में भिगोने के बाद एक लोहे की जाली या बाँस से बनी टोकरी में निकाल लेते हैं, जिससे उसमें से अतिरिक्त पानी निकल जाए। भूसे में पानी की मात्रा 60-70 प्रतिशत रहनी चाहिए। बीज की मात्रा गीले भूसे के वजन के अनुसार 2-3 प्रतिशत मिलाते हैं। भूसे में मशरूम बीज दो तरह से मिलाते हैं। प्रथम विधि में भूसे में आवश्यकतानुसार बीज की मात्रा मिला देते हैं। दूसरी विधि में भूसे को थैलियों में भरते समय परत दर परत बीज मिलाते हैं। थैलियों को भरने से पहले इसके नीचे के दोनों किनारे काटते हैं ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाए। थैली भरने के बाद हल्के हाथ से दबाकर ऊपर से रबरबैंड बांध देते हैं तथा थैली के दोनों तरफ चार-चार छिद्र हवा के आवागमन के लिए कर देते हैं।

बीज बढ़वार- वातावरण के अनुसार ऑयस्टर मशरूम के कवक जाल को पूरी थैली में फैलने में 14-20 दिन लगते हैं। बीज बढ़वार के लिए तापमान 20°C-30°C एवं नमी 70-90 प्रतिशत होनी चाहिए।

सुझाव

- मशरूम उत्पादन कक्ष में सफाई का विशेष ध्यान रखें।
- उत्पादन कक्ष में अनावश्यक ना घुसें।
- कक्ष में नमी एवं तापमान उपयुक्त रखें।
- तापमान बढ़ने पर दीवारों पर भी छिड़काव करें।
- मशरूम बैग पर दिन में दो बार पानी का अवश्य छिड़काव करें।
- उत्पादन के दौरान उत्पादन कक्ष में 15-20 दिन के अंतराल पर फार्मलीन का 2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
- छिड़काव से पहले मशरूम की तुड़ाई कर लेनी चाहिए।

तैयार मशरूम

उत्पादन एवं तुड़ाई- बीज बढ़वार पूर्ण होने के पश्चात् थैलियों को निकाल दें। अगर कोई हिस्सा खराब दिखे तो उसको अलग करके निकाल दें। खुले हुए मशरूम बंडल पर दिन में तीन-चार बार स्प्रेयर की सहायता से पानी का छिड़काव करें। थैलियां खोलने के 4-7 दिनों में बंडल से छोटे-छोटे मशरूम निकलना शुरु हो जाते हैं तथा 3-4 दिनों में पूरा आकार लेकर किनारे ऊपर की ओर मुड़ने लगते हैं। तब इन्हें घुमाकर तोड़ लेना चाहिए। एक बन्डल से 5-6 बार मशरूम निकलती है तथा 100 किलोग्राम सूखे भूसे से लगभग 75 किलोग्राम ताजा मशरूम प्राप्त होती है। ■

केले में प्राथमिक पोषक तत्वों का महत्व

अर्जुन सिंह*, के. जे. जयभास्करन*, आर. पिच्चेमुथ्तु* और एस. उमा*

नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवम् पोटाश प्राथमिक पोषक तत्व कहलाते हैं, क्योंकि ये पौधों के विकास तथा फलन में महत्वपूर्ण हैं। केले के विकास और अच्छी पैदावार के लिए इन खनिज पोषक तत्वों की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है, जिनकी अक्सर मिट्टी में कमी पाई जाती है। एक अनुमान के अनुसार प्रति हैक्टर केले की फसल लगाने के लिए, लगभग 388 किलोग्राम नाइट्रोजन (N), 52 किलोग्राम फॉस्फोरस (P), 1500 किलोग्राम पोटाश (K) की आवश्यकता होती है। इसलिए मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने और उच्च उपज निरंतर लेने के लिए हर साल पोषक तत्वों की भारी मात्रा को प्रतिस्थापित करना पड़ता है।

केला एक लंबी अवधि की फसल है (10-15 महीने)। विभिन्न पोषक तत्वों की कमी के लक्षणों के अंतरिम सुधार से फसल में आर्थिक नुकसान से बचा जा सकता है। केले में कुशल पोषण प्रबंधन के लिए, ये अंतरिम उपचारात्मक उपाय पोषक तत्व और लक्षण विशिष्ट होने चाहिए। इसके लिए, किसानों को केले में पोषण संबंधी कमी के लक्षणों के बारे में पता होना चाहिए और उन्हें इन लक्षणों को वायरस और फंगसजनित रोगों के लक्षणों से अलग करने तथा पहचान करने में सक्षम होना चाहिए।

नाइट्रोजन कमी के लक्षण

नाइट्रोजन की कमी के लक्षण जल्दी दिखाई देते हैं और जल्द ही सभी पत्तियां प्रभावित होती हैं। पत्तियाँ हल्के हरे रंग की होती हैं, जिनमें मध्यशिरा, डंठल और पत्ती म्यान लाल गुलाबी रंग के होते हैं। क्रमिक पत्तियों के बीच की दूरी कम हो जाती है, पतियों का आकार छोटा हो जाता है, जिससे पौधों को 'रोसेट' रूप मिलता है। पत्ती का पीला हरा रंग और बाधित विकास पानी की कमी और खराब जल निकासी से भी जुड़ा हुआ है, जिनका उचित प्रबंधन होना जरूरी है। नाइट्रोजन की निरंतर कमी से फल उत्पादन में भारी गिरावट होती है।

फॉस्फोरस

फॉस्फोरस एक आवश्यक प्राथमिक पोषक तत्व है, क्योंकि यह ऊर्जा चयापचय में शामिल आवश्यक बायोमॉलीक्यूल्स जैसे एटीपी, का एक संरचनात्मक घटक है। यह सौर ऊर्जा को अमीनो एसिड और फाइबर में परिवर्तित करने में मदद करता है। इसके अलावा जड़ वृद्धि और पौधों के विकास को बढ़ावा देता है। अध्ययन में पाया गया कि फॉस्फोरस के समुचित उपयोग से न केवल फल उत्पादन बढता है बल्कि उनकी गुणवत्ता भी निखरती है।

कमी के लक्षण

कम P आपूर्ति के परिणामस्वरूप पौधे व जड़ का विकास बाधित होता है। यह पौधे में एक गतिशील पोषक तत्व है। इसकी कमी के लक्षण सबसे पहले पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते हैं। पुराने पत्तों में एक सीमांत हरिद्रोग (क्लोरोसिस) होता है, जिसमें बैंगनी भूरे रंग के धब्बे विकसित होते हैं और वो अंततः आरादांतनुमा नेक्रोसिस में बदल जाते हैं। प्रभावित पत्तियां मुड़ जाती हैं, पर्णवृंत टूट जाता है और युवा पत्तियों का गहरा नीला हरा रंग होता है।

नाइट्रोजन

केले के पौधे की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन को सबसे महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है, जो बहुत उपजाऊ मिट्टी में भी कम मात्रा में उपलब्ध है। पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक मात्रा के मामले में यह पोटेशियम के बाद दूसरे स्थान पर है। पौधे के विकास पर N का प्रभाव किसी भी अन्य पोषक तत्व की तुलना में अधिक दिखाई देता है। पौधों में कोई N संग्रहण नहीं होता है। अतिरिक्त N पौधे की वृद्धि को बढ़ावा देता है, सिवाय इसके कि जब अन्य कारक विकास को सीमित करते हैं और आगे N को अवशोषित नहीं किया जाता है।

नाइट्रोजन कमी के लक्षण

*भाकृअप-राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र, तिरुचिरापल्ली, तमिलनाडु-620102

सारणी: केले में उर्वरकों की मात्रा एवं उपयोग का समय

केले की प्रमुख व्यावसायिक प्रजातियों के लिए उर्वरक उपयोग की अनुसूची (ग्राम/पौधा/फसल चक्र)									
किस्में	**रोपाई के तीसरे माह**			**रोपाई के पांचवें माह**			**रोपाई के सातवें माह**		
	यूरिया	**एसएसपी1**	**एमओपी2**	**यूरिया**	**एसएसपी**	**एमओपी**	**यूरिया**	**एसएसपी**	**एमओपी**
पूवन, नेय पूवन, रस्थली, कर्पूरवल्ली	100	200	150	200	-	250	150	-	200
बौना (ड्वार्फ) कैवेंडिश, रोबस्टा, ग्रांड नैने, नेन्द्रन, मोंथन	100	200	200	200	-	300	150	-	250
एसएसपी[1] – सिंगल सुपर फॉस्फेट, **एमओपी**[2] – म्यूरिएट ऑफ पोटाश									

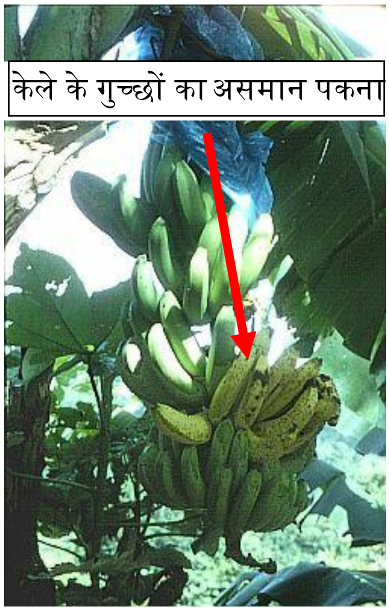

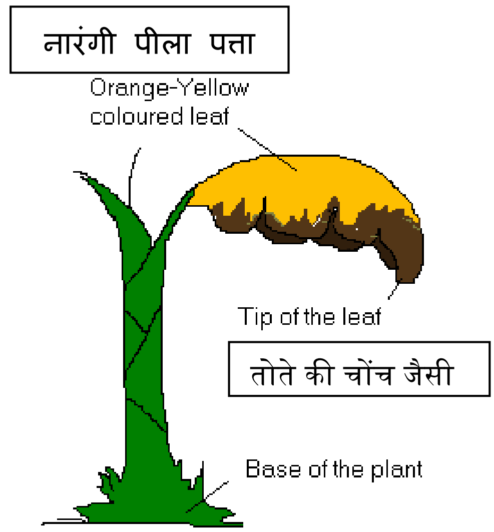

पोटेशियम की कमी के प्रमुख लक्षण

पोटेशियम

केले के पोषण में पोटेशियम एक प्रमुख तत्व है। पोटेशियम की कमी से सबसे अधिक प्रभावित अंग केले का गुच्छा होता है, इसलिए केले में पोटेशियम का महत्व और भी बढ़ जाता है। फलों के विकास को K की कमी दो तरीकों से प्रभावित करती है। पत्तियों से फल तक कार्बन यौगिकों का स्थानांतरण कम हो जाता है और यहां तक कि जब शक्कर फल तक पहुंचती है तो स्टार्च में उसका रूपांतरण प्रतिबंधित होता है। इस प्रकार k की कमी से "पतले फल" और "नाजुक गुच्छों" का उत्पादन होता है। यह अक्सर किसानों द्वारा खेतों में देखा जाता है। जैसे-जैसे K की आपूर्ति बढती है, शर्करा /एसिड अनुपात में वृद्धि होती है और यह शर्करा के बढने तथा अम्लता में कमी से होती है। इस प्रकार k आपूर्ति का फल की गुणवत्ता पर और उसकी उपज पर प्रभाव पड़ता है।

कमी के लक्षण

पोटेशियम की कमी के प्रमुख लक्षण "पत्ती गिरना", "समय से पहले पीलापन" और "पीला केला" होना है। k की कमी का सार्वभौमिक लक्षण पुराने पत्तों पर नारंगी पीले क्लोरोसिस का होना और उसके बाद पत्तियों का तेजी से सूखना है। पत्ती का जीवनकाल काफी कम हो जाता है। मध्यशिरा मुड़ जाती है, जिससे पत्ती की नोंक पौधे के आधार की ओर इशारा करती हुए प्रतीत होती है। K की कमी के अन्य प्रभाव चोकिंग, पत्ती का आकार कम होना, फूल आने में देरी, फल की संख्या प्रति गुच्छा और हाथ संख्या प्रति गुच्छा और विशेष रूप से फल आकार में कमी होना है।

प्रबंधन

नाइट्रोजन एवं पोटाश उर्वरक मृदा में अधिक घुलनशील होते हैं। इनकी उपयोग दक्षता बढाने के लिए, एक साथ देने की बजाय 3 भागों में बराबर बांट कर दी गयी सारणी के अनुसार उपयोग करनी चाहिए। जबकि फॉस्फोरस वाले उर्वरक को एक ही बार में, गड्ढे भरते समय अथवा पहली/दूसरी पेड़ी में पहली मिट्टी चढ़ाते समय दिया जाता है। नाइट्रोजन तथा पोटेशियम वाले उर्वरकों को पौधों के आस-पास गुड़ाई करके बनाए गए थालों में 45 सेंमी., 60 सेंमी. और 75 सेंमी. की दूरी पर क्रमशः रोपाई के तीसरे, पांचवें और सातवें माह बाद दिए जाने चाहिए।

तात्कालिक प्रबंधन: रोपाई के बाद केले में प्राथमिक पोषक तत्वों की कमी कभी-कभी दिखाई पड़ती है। केला एक लम्बी अवधि की फसल है। इसमें इन कमियों को दूर करना का पर्याप्त समय होता है। नाइट्रोजन की कमी के तत्काल सुधार के लिए 1% यूरिया घोल (10 ग्राम यूरिया प्रति लीटर पानी) का पत्तियों पर छिड़काव करें या 100 ग्राम यूरिया प्रति पौधे की दर से मृदा में मिलाएं। पोटाश की कमी को दूर करने के लिए तत्काल 2% पोटेशियम सल्फेट (20 ग्राम प्रति लीटर पानी) के पर्ण स्प्रे या प्रति पौधा 200 ग्राम की दर से म्यूरेट ऑफ पोटाश का मृदा अनुप्रयोग करने से लाभ होता है।

केला मोबाइल ऐप

भाकृअप-राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र, तिरुचिरापल्ली, तमिलनाडु द्वारा विकसित मोबाइल ऐप "केला उत्पादन प्रौद्योगिकी" का किसान भाई उर्वरक की मात्रा की गणना करने हेतु उपयोग कर सकते हैं। इसके अलावा इस ऐप पर केला उत्पादन से जुड़ी सभी तकनीकी जानकारियों का लाभ ले सकते हैं। केले की खेती से जुड़ी अधिक जानकारी लेने के लिए राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र से सम्पर्क किया जा सकता है।

गुलदाउदी की व्यावसायिक खेती

प्रियंका शर्मा*, **गौरव शर्मा*** और **अंजना खोलिया***

गुलदाउदी के फूल आकर्षक और मनमोहक होते हैं। इसकी विभिन्न रंगों वाली किस्में सफेद, पीली, लाल, गुलाबी आदि उपलब्ध हैं। गुलदाउदी का उपयोग डंडी वाले या कट फ्लावर के रूप में गुलदस्ते बनाने तथा घरों एवं कार्यालयों में सजावट के लिए गुलदान में रखने के लिए किया जाता है। गुलदाउदी के बिना डंडी वाले फूलों का उपयोग मालाएं, अलंकार बनाने, पूजा, विवाह, शादी भवनों, मंदिरों इत्यादि की सजावट के लिए किया जाता है। इसे गमलों व क्यारियों में भी सजावट हेतु उगाया जाता है।

पूसा गुलदस्ता

फ्लर्ट

कुंदन

गुलदाउदी एक बहुवर्षीय एवं शाकीय पौधा है। गुलदाउदी का वानस्पतिक नाम *डैन्ड्रेन्थीमा ग्रैंडीफ्लोरा* है और यह ऐस्टरेसी कुल का पौधा है। बुन्देलखण्ड की जलवायु एवं मृदा भी इसके उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं साथ ही यहाँ के प्रमुख बड़े शहर में सड़क एवं रेल यातायात की भी अच्छी सुविधायें हैं। इससे इसे बाहर बेचने के लिए भेजा जा सकता है। यह बरसात में लगाया जाना वाला एवं शरद ऋतु में दीपावली के समय खिलने वाला फूल है।

जलवायु

गुलदाउदी की अच्छी बढ़वार व अधिक फूल प्राप्त करने के लिए शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। अच्छी वृद्धि हेतु पर्याप्त धूप रहनी चाहिए।

तापमान

गुलदाउदी को उगाने के लिए दिन का 20° से 25° सेंटीग्रेड एवं रात का 15°-20° सेंटीग्रेड तापमान उचित पाया गया है। पुष्प उत्पादन के लिए रात्रि का तापमान ज्यादा महत्वपूर्ण है। यदि तापमान 10° सेंटीग्रेड से नीचे चला जाये तो पुष्प कलियाँ नहीं बनती हैं।

प्रकाश

गुलदाउदी सामान्य रूप से छोटे दिन की अवधि का पौधा है। इसे पुष्प कलियों को उत्पन्न करने के लिए प्रतिदिन 9.5 घंटे से कम रोशनी चाहिए। साधारणतया छोटे दिनों वाली शरद ऋतु ही प्रदर्शनी योग्य पुष्प पैदा करने में उपयुक्त होती है। पहाड़ी क्षेत्रों में गुलदाउदी में फूल अक्टूबर माह से तथा मैदानी क्षेत्रों में नवंबर माह से आने शुरू होते हैं।

प्रमुख किस्में

गुलदाउदी में मुख्यत: दो प्रकार की किस्में होती है: स्टैन्डर्ड और स्प्रे (सारणी)।

पौधा प्रवर्धन

गुलदाउदी का प्रवर्धन कलमों या कटिंग एवं भूस्तारिकाओं या सकर द्वारा किया जाता है। व्यावसायिक रूप से गुलदाउदी के प्रवर्धन के लिए कलमें तने के शीर्षस्थ भाग से तैयार की जाती हैं। मातृ पौधों से मार्च से लेकर जून तक कलमें ले सकते हैं। पत्तियों वाली 10-12 सें.मी. लम्बी कलमें अधिक अच्छी होती हैं। कलमों के शीर्ष भाग पर 2-4 पत्तियाँ छोड़ देते हैं, बाकी निचले हिस्से की पत्तियों को निकाल देते हैं। इसके पश्चात् कलमों के निचले हिस्सों को सेरेडेक्स 'बी' पाउडर या 500 पी. पी. एम. सांद्रता वाले एन. ए. ए.

सारणी: गुलदाउदी की उन्नत किस्में

क्र. स.	प्रकार	विशेषता	प्रमुख किस्में
1	स्टैन्डर्ड किस्में	स्टैण्डर्ड किस्मों में एक डंडी पर शीर्षस्थ एक बड़ा फूल।	सफेद- पूर्णिमा, व्हाइट स्टार पीली- यैलो स्टार, फिजी यैलो गुलाबी- फिजी, टाटा सेंचुरी केसरी - थाई चीन क्वीन
2	स्प्रे किस्में	स्प्रे किस्मों में शीर्षस्थ फूल निकाल देते हैं। इस प्रकार से एक डंडी पर अनेक फूल।	सफेद- व्हाइट बुके, सर्फ, बीरबल साहनी, बग्गी पीली-अजय, ननाको, कुंदन, अपराजिता लाल-रवि किरण, फ्लर्ट केसरी-पूसा गुलदस्ता

*रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी 284003

थाई चीन क्वीन

के घोल में डुबोकर लगाना चाहिए। कलमों को बालू या फिर कोकोपिट में लगाया जाता है। कलम लगाने के बाद स्प्रिंक्लर सिंचाई दिन में 2-3 बार हल्की सिंचाई पत्तियों पर करते हैं। इस प्रकार कलमें लगाने के लगभग 25-30 दिनों बाद जड़ें विकसित हो जाती हैं तथा पौधे रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं।

भूमि की तैयारी

यह सभी प्रकार की भूमि पर उगाया जा सकता है परन्तु जल निकासयुक्त बलुई दोमट मिट्टी, जिसका पी.एच मान 6.2 से 6.5 हो, उत्तम होती है। भूमि की अच्छी तरह 3-4 जुताई करके पाटे की मदद से मिट्टी समतल एवं भुरभुरी कर तैयार करनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय 5 टन सड़ी गोबर की खाद मिलाकर सिंचाई की सुविधानुसार क्यारियाँ बनानी चाहिये।

लगाने का समय

बुन्देलखण्ड में गुलदाउदी के पौधों को जुलाई से अगस्त महीने में लगाया जाता है।

विधि

पौधों को पंक्तियों में लगाया जाता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी व एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी 30-30 सेंमी. रखी जाती है।

खाद व सिंचाई

गुलदाउदी की खेती के लिए 5 किलो ग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद तथा 30 ग्राम प्रत्येक नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम को प्रति वर्गमीटर मिट्टी में पौधे लगाने से पहले मिलाना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस और पोटेशियम की पूरी मात्रा पौधे लगाने से पहले मिलानी चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई आधी मात्रा पौधे लगाने के 45 दिन बाद मिट्टी में मिलानी चाहिए।

कृषि क्रियाएं

गुलदाउदी के पौधों में कम से कम दो निराई-गुड़ाई आवश्यक है। प्रथम गुड़ाई पौधों के रोपण के 40-45 दिन बाद तथा द्वितीय गुड़ाई 60 दिन बाद करनी चाहिए। समय-समय पर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए।

पैकिंग

डंडी वाले फूलों को बक्सों में एवं बिना डंडी वाले फूलों को गनी बैग या बांस की टोकरियों में पैक करके दूरस्थ या स्थानीय बाजार भेजा जाता है। पैकिंग के बाद बैग या टोकरी को ऊपर से पानी से गीला करना चाहिए ताकि पुष्प को कम से कम क्षति हो व ताजी अवस्था में बनाये रखा जा सके।

फूलों की तुड़ाई

गुलदाउदी की बड़ी फूल वाली किस्मों के फूल तभी काटने चाहिए जब वे पूरी तरह से खिल जाएं और उनकी बाहरी पंखुड़ियां पूरी तरह से सीधी हो जाएं। फूल वाली टहनी को जमीन से लगभग 10 सेंमी. की ऊँचाई से काटना चाहिए। काटने के बाद फूलों का निचला 5-6 सें.मी. हिस्सा साफ पानी की बाल्टी में रखना चाहिए तथा किसी ठन्डे कमरे या छायादार कमरे में 3-4 घंटे के लिए रख देना चाहिए। फूलों की तुड़ाई सुबह या शाम के समय करनी चाहिए। इसी तरह माला के लिए भी पूर्णरूप से खिले फूलों को तोड़ा जाता है।

व्हाईट स्टार

पिंचिंग

खेत में पौधे लगाने के 30 दिनों बाद पिंचिंग की क्रिया की जाती है। इससे सहायक शाखाओं की वृद्धि अधिक होती है एवं पुष्प की डण्डी की संख्या भी बढ़ जाती है। पिंचिंग में पौधों की 6 से 7 पत्तियाँ छोड़कर शीर्षस्थ भाग को हाथ से नोंच कर पौधों से अलग कर देते हैं।

डिसबडिंग

इस क्रिया में अवांछित कलिकाओं को पुष्प डण्डियों से तोड़ कर अलग कर देते हैं। स्प्रे टाईप गुलदाउदी में शीर्षस्थ कलिकाओं को मटर के दाने के आकार से भी छोटी अवस्था में ही तोड़ देते हैं। स्टैण्डर्ड गुलदाउदी में एक पुष्प डण्डी पर केवल शीर्षस्थ कलिका छोड़कर अन्य कलिकाओं को मटर के दाने के आकार की अवस्था से पहले तोड़ देते हैं।

टाटा सेंचुरी

डीशूटिंग

डीशूटिंग गुलदाउदी की स्टैण्डर्ड टाईप किस्मों में किया जाता है। इस प्रक्रिया में एक पुष्प डण्डी पर अन्य दूसरी शाखाएँ निकलने के बाद उन शाखाओं को 2 सेंमी. लम्बी होने पर पुष्प डण्डियों से अलग कर देते हैं।

सहारा देना

पुष्प वृंत/डंठल का पूर्ण रूप से सीधा होना गुणवत्तायुक्त पुष्प डंठल की बहुत ही बड़ी विशेषता है। गुलदाउदी की स्प्रे एवं स्टैंण्डर्ड टाईप की पुष्प डण्डी की लम्बाई अधिक होने के कारण पुष्प डण्डियों को सीधा रखने के लिए प्लास्टिक की जाली का इस्तेमाल करना चाहिए। जाली की दो से तीन परत लगानी चाहिए।

भण्डारण

फूलों को काटने व तोड़ने के बाद एक से दो घंटे के लिए छायादार कमरे में रखा जाता है। गुलदाउदी को 0.5 से 1 सेंटीग्रेड तापमान पर 10 से 15 दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदते हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें। इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख के साथ अपना ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

–संपादक

शीतोष्ण फल उत्पादन में कीट परागण का महत्व

संगीता शर्मा*, **मीना ठाकुर****, **जोगिन्द्र सिंह वर्मा*****, **दिनेश सिंह ठाकुर****** और **नीना चौहान******

अधिकतम शीतोष्ण फलों में अच्छी गुणवत्ता के फल व बीज उत्पादन के लिए परपरागण की आवश्यकता होती है। कीटों द्वारा किया गया परागण कीटीय परागण कहलाता है। बगीचों में मधुमक्खियों व अन्य प्राकृतिक तौर पर पाए जाने वाले परागण कीटों के कुशल प्रबंधन द्वारा परागण क्रिया को और अधिक सफल किया जा सकता है। विभिन्न प्रकार की मधुमक्खियां, मक्खियां, तितलियां, पतंगे, बग, बीटल तथा ततैये इत्यादि मुख्य परागणकर्ता कीट हैं। सभी प्रकार के कीटों में मधुमक्खियां ही विश्वसनीय व निपुण परागणकर्ता कीट हैं, इसलिए ये बागवानों के लिए अधिक महत्वपूर्ण हैं। प्रमुख फल फसलों में परागण क्रिया व अधिक फसल प्राप्त करने के लिए मधुमक्खियों का परागण में प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है।

हिमाचल पदेश के ठंडे क्षेत्रों में जल्दी फूल खिलने वाली फसलों के लिए देसी मधुमक्खी *एपिस सेराना* परागण के लिए अधिक सक्षम है और अब विदेशी मधुमक्खी, *एपिस मेलिफरा* भी प्रयोग में लाई जा रही है। यह मधुमक्खी कम फूलों तथा कम तापमान में भी कार्य करती है। मधुमक्खियों द्वारा शीतोष्ण फलों में होने वाले परागण में 15-20 प्रतिशत की बढ़ोतरी की जा सकती है। किसी बगीचे में मधुमक्खियों का अधिक संख्या में होना बेहतर परागण प्रक्रिया को सुनिश्चित करता है और फलस्वरूप उत्पादन व गुणवत्ता को भी बढ़ाता है।

सेब में परागण

सेब में परागण क्रिया मुख्यत: कीटों द्वारा ही होती है। शिमला के पहाड़ी क्षेत्रों में सेब की फसल पर परागणकर्ता कीटों की 44 किस्में पाई गई हैं। मधुमक्खियों के अतिरिक्त बम्बल मक्खी व हैलिकटस भी सेब बगीचों में पाई जाती हैं। बम्बल मक्खी शून्य डिग्री तापमान पर भी सेब में परागण करने में सक्षम है। इन मधुमक्खी परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य कीटों में *डिपटरा* (अरिस्टेलिस, मसकिडस, सिरफिडस), लेपिडोपटरा (हेलियोथिस, प्लूसिया, गोभी की मक्खी), कोलियोपटरा (लेडी बर्ड बीटल) और थाइसिनोपटरा (थ्रिप्स) प्रमुख हैं। विभिन्न कीटों में केवल मधुमक्खियां ही सबसे उत्तम परागण कीट हैं।

मौनवंशों को बगीचे में रखने से पहले बागवानों को कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना चाहिए जिनमें प्रमुख हैं वंश

परागण में सहायक मधुमक्खी

का शक्तिशाली होना। सेब परागण के लिए इस्तेमाल होने वाले किसी भी मौनगृह में कम से कम 6-7 फ्रेम होने चाहिए। इनमें न्यूनतम 20,000 वयस्क मधुमक्खियां शामिल होनी चाहिए। मौनवंशों को बगीचे में केवल उसी समय ले जाएं जबकि 5-10 प्रतिशत फूल खिल गए हों। क्लोवर मधुमक्खियों को सेब की तुलना में अधिक आकर्षित करता है। इसलिए प्रभावी परागण के लिए इसे नष्ट कर दें। परागण प्रक्रिया में मौसम का विशेष महत्व है क्योंकि मौसम मधुमक्खियों के कार्य में प्रभाव डालता है। यदि सर्दी का प्रकोप चल रहा हो तो *एपिस मेलिफेरा* के स्थान पर *एपिस सेराना* के वंशों का ही प्रयोग करें क्योंकि यह मधुमक्खी कम तापमान पर भी कार्य करती है। इसके अतिरिक्त, बगीचों में हवा रोकने का भी प्रबंध करना चाहिए क्योंकि अधिक तेज हवाएं मधुमक्खियों के कार्य में बाधा डालती हैं।

सेब परागण के लिए *एपिस मेलिफरा* के दो वंश व *एपिस सेराना* के 3 वंश प्रति हैक्टर प्रयोग किए जाते हैं। जिन बगीचों में परागण किस्मों का अनुपात कम हो (30 प्रतिशत से कम) उनमें एपिस मेलिफरा के 8 वंश दो झुंडों में रखने से फल उत्पादन बढ़ा है। जब सेब में फूल खिले हों और मधुमक्खियां फूलों का भ्रमण कर रही हों उस समय कीटनाशकों का छिड़काव न करें।

नाशपाती में परागण

सेब की भांति नाशपाती में अच्छी पैदावार के लिए पर-परागण की आवश्यकता होती है। मधुमक्खियां नाशपाती की सबसे महत्वपूर्ण परागकर्ता हैं। हालांकि अन्य कीट जैसे डिपटरा (*सिरफिड़ फ्लाईज़*), लेपिडोपटरा (*हेलियोथिस*, गोभी की तितली), *कोलियोपटरा* (लेडी बर्ड बीटल), *हायमिलोपटरा* (बम्बल मक्खी, हेलिकटस) भी नाशपाती के फूलों का दौरा करते हैं। सेब के फूलों की अपेक्षाकृत नाशपाती के फूल हल्के रंग व हल्की गंध के

चेरी में परागण

चेरी की मीठी किस्मों में परागण मुख्य रूप से मधुमक्खियों द्वारा किया जाता है। खट्टी चेरी की लगभग सभी किस्में स्वयं फूलने वाली होती हैं। चेरी के फूल गुलाबी सफेद और प्रचुर मात्रा में मधु तथ पराग उत्पन्न करते हैं। इसलिए मधुमक्खियां इन फूलों के प्रति अधिक आकर्षित होती हैं। चेरी का पुष्पण काल छोटा होता है और 50 प्रतिशत फूल 3-4 दिनों में खिल जाते हैं। इस दौरान प्राकृतिक परागणकर्ताओं की कमी होने से ताकतवर मौनवंशों का बगीचे में होना आवश्यक हो जाता है। इसलिए सफल परागण के लिए *एपिस मेलीफेरा* के 2-3 या *एपिस सेराना* के 4-6 समूहों को प्रति हैक्टर क्षेत्र में समान रूप से रखने पर अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। मधुमक्खियों के अतिरिक्त कई अन्य कीटों जैसे सिरफिड मक्खी, बम्बल मक्खी, पतंगे, लेडी बर्ड बीटल आदि को चेरी के फूलों पर भ्रमण करते देखा गया है।

*क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान व प्रशिक्षण केंद्र, मशोबरा, शिमला, हिमाचल प्रदेश; **कीट विज्ञान विभाग, डॉ वाई.एस.परमार औद्यानिकी एवं बागवानी विश्वविद्यालय, नोणी, सोलन, हि.प्र.; ***क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान व प्रशिक्षण केंद्र, बजौरा, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश

कारण मधुमक्खियों को अधिक आकर्षित नहीं कर पाते हैं। पर्याप्त परागण के लिए *एपिस मेलिफेरा* की 5-6 या *एपिस सेराना* के 8-9 समूहों को समान रूप से प्रति हैक्टर क्षेत्र में रखने की सिफारिश की गई है। यदि बगीचे में मधुमक्खी की संख्या कम है, तो मौनवंशों को दो या दो से अधिक बार बगीचों में रखना उपयोगी सिद्ध होता है।

प्लम और प्रून में परागण

प्लम तथा प्रून में पर-परागण भौंरों तथा जंगली मक्खियों द्वारा भी किया जाता है। मधुमक्खी प्राचीनकाल से ही मुख्य तथा प्रभावी परागणकर्ता है। इसलिए पर्याप्त परागण के लिए 2-3 मौनवंशों को प्रति हैक्टर क्षेत्र में रखा जाता है।

आड़ू में परागण

आड़ू की अधिकतर किस्में स्वयं फलने वाली होती हैं। इसलिए इस फसल में परागकर्ता की अधिक आवश्यकता नहीं पायी गई है। परागण एक साधारण क्रिया है और फूल भी मधुमक्खियों के लिए मोहक हैं तो केवल *एपिस मेलीफेरा* के 1-2 या *एपिस सेराना* के 2-3 मौनवंश प्रति हैक्टर क्षेत्र में पर्याप्त होते हैं।

मधुमक्खियों व कीटों द्वारा परागण बागवानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। परागण से फलों के आकार, रंग, स्वाद व भंडारण में सुधार आता है। हिमाचल प्रदेश में राज्य सरकार एवं कुछ प्राइवेट मधुमक्खी पालक बागवानों को मौनवंश किराए पर उपलब्ध करवा रहे हैं। परिणामस्वरूप फल उत्पादकों में मौन द्वारा परागण के प्रति जागरूकता बढ़ी है और वे स्वयं ही मौनवंशों को अपने बगीचे में रखने लग गए हैं। यह परागण और शहद उत्पादन दोनों में सहायक साबित होगा। ■

बादाम में परागण

बादाम के पेड़ में प्रभावी परागण के लिए मधुमक्खियां उत्तम परागणकर्ता हैं। सफल परागण के लिए एपिस मेलिफेरा के 5-8 शक्तिशाली समूहों या ऐपिस सेराना के 10-12 समूहों को प्रति हैक्टर क्षेत्र में 5-10 प्रतिशत पुष्पण के समय रखने की सिफारिश की जाती है। समूहों का वितरण बाग में समान रूप से एक साथ न करके अलग-अलग करना चाहिए। मधुमक्खियों के अलावा कई जंगली मक्खियां, भौंरे तथा सिरफिड मक्खियां भी बादाम में परागण क्रिया में सहयोग देती हैं।

खुमानी में परागण

खुमानी की अधिकांश किस्मों में स्व-परागण से फल लगते हैं। अधिक पैदावार व गुणवतायुक्त फल प्राप्त करने के लिए कीटों द्वारा पर-परागण उपयोगी रहता है, जिसमें मधुमक्खियां प्रमुख परागण कारक हैं। इसलिए बाग में 2-3 मौनवंशों की प्रति हैक्टर क्षेत्र में आवश्यकता सफल परागण के लिए पड़ती है। खुमानी में एपिस मेलिफेरा की तुलना में एपिस सेराना अधिक प्रभावी परागण करने में समर्थ हैं।

सेहत का खजाना

चमत्कारी पादप - सोलो

दीपक कोहली*

लद्दाख में पाई जाने वाली यह खास जड़ी-बूटी 'सोलो' किसी भी तरह संजीवनी से कम नहीं है। यह वही संजीवनी बूटी नहीं है, जिसका जिक्र रामायण में किया गया है परन्तु इसके सेहत लाभ को देखते हुए कहा जा सकता है कि यह संजीवनी से कम भी नहीं है।

बहुत ऊंचाई वाले पहाड़ों पर जहां सांस लेना मुश्किल होने लगता है, वहां सेहत को संभालना किसी चुनौती से कम नहीं है। मैदानी इलाकों से जब भी लोग ऐसे ही ऊंचाई वाले क्षेत्र लद्दाख लोग जाते हैं, तब उन्हें कम से कम 24 घंटे वहां के तापमान के साथ खुद को समायोजित करने में लगते हैं। लद्दाख में ही एक ऐसी जड़ी-बूटी भी मिलती है, जो शरीर को वहां के तापमान के साथ एडजस्ट करने में मदद करती है। इसका वैज्ञानिक नाम 'रोडियोला' है, जिसे वहां की स्थानीय भाषा में 'सोलो' कहा जाता है।

सोलो के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह प्रतिरोधक क्षमता को बेहतर बनाती है। इसके साथ ही ऊंचाई के वातावरण में शरीर को ढलने में मदद करती है। इसका सबसे खास गुण है रेडियो-एक्टिविटी से बचाव करना। रोडियोला ठंडी और ऊंचाई वाली जगह पर पाई जाती है। स्थानीय लोग इसे 'सोलो' कहते हैं और इसकी पत्तियों का सब्जियों में प्रयोग करते हैं। हालांकि लेह स्थित डिफेंस इंस्टीट्यूट ऑफ हाई एल्टीट्यूड रिसर्च (डीआईएचएआर) के शोध से पता चलता है कि रोडियोला का इस्तेमाल कई बीमारियों के इलाज में किया जा सकता है।

डीआईएचएआर के निदेशक के अनुसार 'रोडियोला एक आश्चर्यजनक पौधा है, जो रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाता है। कठिन जलवायु की स्थितियों में शरीर को अनुकूल बनाता है और रेडियो एक्टिविटी से बचाव करता है। इस पौधे में सीकोंडरी मेटाबोलाइट्स और फायटोएक्टिव तत्व पाए जाते हैं, जो विशिष्ट तत्व हैं। यह गामा रेडिएशन के प्रभाव को कम करता है। लेह स्थित डीआरडीओ की प्रयोगशाला दुनिया की सबसे ऊंची जगह पर स्थित कृषि-पशु शोध प्रयोगशाला है। इस प्रयोगशाला में रोडियोला पर दशकों से शोध हो रहा है।

इस पौधे की अनुकूलन क्षमता सैनिकों और कम दवाब व कम ऑक्सीजन वाले वातावरण में अनुकूल होने में मदद कर सकती है। इसके साथ ही इस पौधे में अवसादरोधी और भूख बढ़ाने वाला गुण भी हैं। सियाचीन जैसे इलाके बेहद ठंडे होते हैं. यहां लगातार बर्फबारी की वजह से तापमान काफी नीचे चला जाता है। ऐसी जगहों पर रहने से इंसान के भीतर अवसाद पैदा होता है। सियाचीन में तैनात सैनिकों के लिए यह सामान्य समस्या है। इस पौधे के सेवन से डिप्रेशन दूर करने में मदद मिलेगी। डिफेंस इंस्टीट्यूट ऑफ हाई एल्टीट्यूड रिसर्च (डीआईएचएआर) के वैज्ञानिकों ने अपने संस्थान की दो एकड़ जमीन में 'सोलो' की खेती की है और इस पर लगातार रिसर्च जारी है। ■

*संयुक्त सचिव, पर्यावरण,वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग, उत्तर प्रदेश शासन, 5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ-226010

पोषण एवं आर्थिक समृद्धि हेतु कटहल

घनश्याम पाण्डेय*, एस. के. शुक्ला**, ए. के. त्रिवेदी*** और संजीव कुमार****

कटहल एक एशियाई उष्ण जलवायु वाला फल है जो कि मोरेसी कुल के अंतर्गत आता है। उपोष्ण फलों के समूह में यह सबसे बड़ा वृक्ष उत्पादित फल है। कटहल की उत्पत्ति भारतवर्ष के दक्षिण-पश्चिम में स्थित पश्चिमी घाट के वर्षा वनक्षेत्र में मानी जाती है। कुछ लोगों का मानना है कि कटहल का उत्पत्ति स्थान मलेशिया है। वर्तमान में कटहल का उत्पादन एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में हो रहा है। इसकी बागवानी के लिए गर्म और नमीयुक्त जलवायु उपयुक्त होती है।

सामान्य परिस्थिति में कटहल के वृक्षों का रोपण 10x10 मी0 की दूरी पर एक घन मीटर गड्ढे में जून-जुलाई में किया जाता है। वानस्पतिक प्रवर्धित पौधों को पहले से तैयार किये गए गड्ढे में रोपित करते समय ध्यान रखना होता है कि कलम वाला भाग जमीन की सतह से 6-9 इंच ऊपर रहे।

पुष्पण, परागण एवं फलों की वृद्धि

यह एकलिंगीय सदाबहार वृक्ष है। जिसमें नर एवं मादा पुष्पक्रम एक ही वृक्ष पर पाये जाते हैं। फूलों में निषेचन संकर परागण द्वारा मुख्यत: वायु के माध्यम से होता है। इसका प्रवर्धन ज्यादातर बीज से होता है, हालांकि वानस्पतिक विधियों द्वारा सफलतापूर्वक इसका प्रवर्धन किया जा रहा है। परागण के पश्चात पुष्प को फल में परिवर्तित होने में 3 से 7 माह तक का समय लगता है। यह स्थान विशेष के वातावरण पर निर्भर करता है। सामान्यतया मादा पुष्प प्राथमिक तने पर तथा नर पुष्प ऊपर की तरफ द्वितीयक एवं तृतीयक शाखाओं पर आते हैं। कटहल में पुष्पण दिसम्बर में शुरू होकर मार्च तक जारी रहता है। यद्यपि सितम्बर-अक्टूबर में फूल आना कोई असामान्य बात नहीं है।

कटहल के वृक्ष में फलन

*भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ 226101; **उ॰ प्र॰ कृषि अनुसंधान परिषद, किसान मंडी भवन, गोमती नगर, लखनऊ

कटहल के फल

परिपक्वता एवं फलों की तुड़ाई

फलों का रंग जब हरे से पीला हो जाए तथा अंगुलियों से फलों को थपथपाने से कुंठित एवं खोखली आवाज आये तो समझना चाहिए कि फल पक गए हैं। कटहल के पकने पर एक विशेष प्रकार की खुशबू आने लगती है एवं फलों की सतह पर काँटे थोड़ा चपटे होने लगते हैं। इस अवस्था में फलों की

रासायनिक गुण एंव पोषक तत्व

कटहल के गूदे एवं बीज में प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन और थायमिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें विटामिन 'बी' कॉम्प्लैक्स समूह के सभी विटामिन्स जैसे बी-6 (पाइरीडाक्साइन), नियासीन, राइबोफ्लेविन एवं फोलिक अम्ल काफी मात्रा में पाए जाते हैं। पोषक तत्वों के अलावा कटहल में काफी मात्रा में रेशे पाए जाते हैं। रेशे की मात्रा कटहल की विभिन्न परिपक्व अवस्थाओं, प्रजातियों एवं स्थानों से प्रभावित होती है। कटहल की विभिन्न अवस्थाओं में पोषक तत्व एवं भौतिक-रासायनिक गुण निम्नवत हैं (सारणी 1)।

सारणी 1: कटहल में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा (100 ग्रा0)

अवयव	अपरिपक्व फल	पका फल	बीज
पानी (ग्राम)	76.2-85.2	72.0-94.0	51.0-64.5
प्रोटीन (ग्राम)	2.0-2.6	1.2-1.9	6.6-7.04
वसा (ग्राम)	0.1-0.6	0.1-0.4	0.40-0.43
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	9.4-11.5	16.0-25.4	25.8-38.4
रेशा (ग्राम)	2.6-3.6	1.0-1.5	1.0-1.5
कुल घुलनशील शर्करा (ग्राम)	-	20.6	-
कुल खनिज तत्व (ग्राम)	0.9	0.87-0.9	0.90-1.2
कैल्शियम (मिग्रा0)	30.0-73.2	20.0-370	50.0
मैग्नीशियम (मिग्रा0)	-	27.0	54.0
फॉस्फोरस (मिग्रा0)	20.0-57.2	38.0-41.0	38.0-97.0
पोटेशियम (मि0ग्रा0)	287-323	191-407	246
सोडियम (मि0 ग्रा0)	3.0-35.0	2.0-41.0	63.2
आयरन (मि0ग्रा0)	0.4-1.9	0.5-1.1	1.5
विटामिन 'ए'(आई यू0)	30	175-540	10-17
थायमिन (मिग्रा0)	0.05-0.15	0.03-0.09	0.25
राइबोफ्लेविन (मिग्रा0)	0.05-0.2	0.05-0.4	0.11-0.30
एस्कार्बिक अम्ल (मिग्रा0)	12.0-14.0	7.0-10.0	11.00

स्रोत: आर्करवायड एवं अन्य (1966) नरसिंहम, (1990) गुनासेना एवं अन्य (1996) आजाद (2000)

कच्चे कटहल के क्यूब

तुड़ाई की जा सकती है। सामान्यतया परिपक्व फलों की तुड़ाई परागण के 12-16 सप्ताह के पश्चात कभी भी की जा सकती है। सब्जी में उपयोग हेतु 700 से 800 ग्राम वजन के अपरिपक्व फलों को भी तोड़ा जा सकता है।

प्रजातियाँ

सामान्यत: कटहल के फल 3 से 30 किग्रा0 तक गोलाकार तथा अण्डाकार होते हैं। फलों की गुणवत्ता के आधार पर कटहल को मुख्यतय: दो प्रकार की प्रजातियों 'दृढ' एवं 'मुलायम' गूदे वाली प्रजातियों में वर्गीकृत किया गया है। पिछले 2-3 दशकों में देश के विभिन्न संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा कटहल की नई-नई किस्में विकसित की गई हैं।

सारणी 2: कटहल की विभिन्न प्रजातियां

क्र. सं.	प्रजातियाँ/किस्में	संस्थान
1	पन्त गरिमा, पन्त महिमा	गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पन्तनगर, ऊधमसिंह नगर (उत्तराखण्ड)
2.	टी.नगर जैक, पी.एल.आर-1, पी.एफ, आर-2 संकर जैक, पनरूति सलेक्शन, थन्जावुर जैक, बरतियार-1, सिंगापुर जैक, बेलीपाला	बागवानी विद्यालय एवं शोध संस्थान, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बतूर-641003 (तमिलनाडु)
3.	स्वर्णा	कृषि विश्वविद्यालय, बेंगलुरु, कर्नाटक
4..	जी 65ए, जी 11ए, सिद्धू	भाकृअनुप- भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान बेंगलुरु, कर्नाटक
5.	स्वर्ण पूर्ति, स्वर्ण मनोहर	भाकृअनुप-पूर्वोत्तर परिसर, शोध केन्द्र फसल प्लान्डू, रांची, झारखण्ड,
6.	कोंकण प्रॉलीफिक	डा. बी.एस.के.के.बी. कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वद्यिालय, ढपोली, रत्नागिरी, महाराष्ट्र
7.	बारामासी	बिधान चन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, मोहनपुर, नादिया, पश्चिम बंगाल
8.	पथ्थामुट्टम, प्रशन्ति, सिन्दूरा, जे.ए.पी.-1, रूद्राश्री, गमलेस	अनिल, जैक नर्सरी, पुत्तूर, कर्नाटक

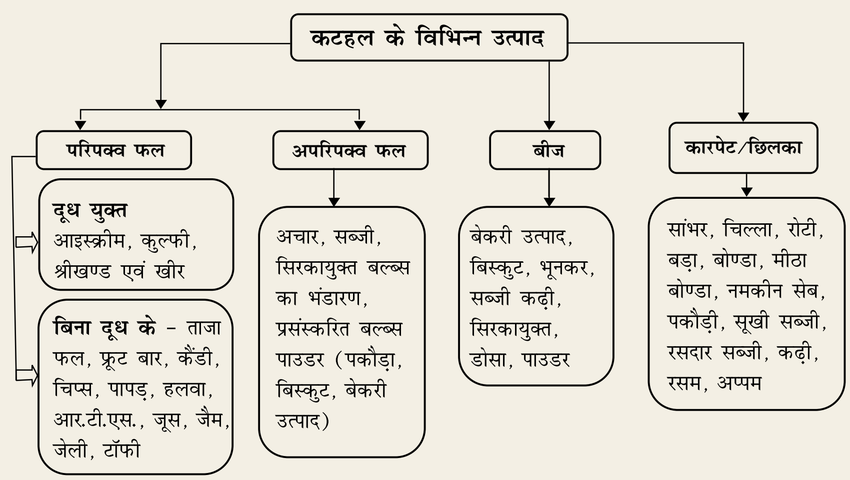

कटहल के फल, बीज एवं एपीकार्प से निर्मित विभिन्न उत्पाद

प्रसंस्करित उत्पाद

कटहल से विभिन्न तरह के प्रसंस्करित उत्पाद तैयार किये जा सकते हैं। इनमें मुख्य रूप से जूस, कैन्डी, और फल बार आदि पके फलों से तैयार कुछ नाम हैं। कटहल के परिपक्व एवं अपरिपक्व फलों से निर्मित विभिन्न प्रकार के फल उत्पादों का विवरण रेखाचित्र में दिया गया है।

औषधीय लाभ एवं अन्य उपयोग

कटहल के विभिन्न भाग जैसे जड़, लेटेक्स, फल एवं बीज का स्थानीय लोगों द्वारा औषधीय उपयोग किया जाता रहा है। इसकी जड़ों के जूस का उपयोग त्वचा की बीमारियों, बुखार एवं पेचिश में होता है। यह अस्थमा से पीड़ित व्यक्तियों के लिए भी लाभप्रद होता है। पत्तियों का उपयोग बुखार, फफोलों एवं त्वचा की बीमारियों में काफी लाभप्रद होता है। पत्तियों के जूस को गर्म करके लेप लगाने से शरीर के घाव को आसानी से ठीक किया जा सकता है। कटहल की पत्तियों, मक्के एवं कोकोनट के छिलकों को एक साथ जलाकर

फ्लेक्स एवं बीज

राख को अकेले या कोकोनट तेल मे मिलाकर लगाने से अल्सर में लाभ होता है। कटहल के लेटेक्स का उपयोग डाइसोपिया, आंख एवं अन्न नलिका की समस्याओं से ग्रसित मरीजों के उपचार में किया जाता है। भुने हुए बीजों का सेवन कामोद्दीपिक के रूप में भी होता है।

विपणन एवं आर्थिक महत्व

अब तक कटहल के विपणन में किसी भी मानक पैकेज का पालन नही किया जाता है। सामान्य रूप से खुदरा विक्रेताओं द्वारा अपरिपक्व एवं परिपक्व फलों को खुदरा एवं थोक व्यापारियों के माध्यम से उत्पादक से उपभोक्ताओं तक विपणन किया जाता है।

निर्यात

अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में कटहल के ज्यादातर ताजे फलों की माँग जापान, मलेशिया यू.के. सिंगापुर, हाँगकाँग एवं अन्य पूर्वी देशों द्वारा की जाती है। एशिया में कटहल के मुख्य निर्यातक थाईलैण्ड, चीन और मलेशिया हैं। मलेशिया अपनी उपज का लगभग 85 प्रतिशत कटहल का निर्यात सिंगापुर और हांगकांग को करता है। कोलम्बिया, भारत, मलेशिया, युगाण्डा, जमैका, थाईलैन्ड, श्रीलंका, बंगलादेश और केन्या का ज्यादातर निर्यात यू.के. के बाजार में किया जाता है।

उत्पादकता

कटहल के एक पूर्ण विकसित पेड़ से औसतन 1.5 से 5 क्विंटल तक फल प्राप्त होते हैं। कटहल के पेड़ों से प्राप्त उपज पर स्थानीय प्रजातियों, प्रति इकाई पेड़ों की संख्या, पौधा रोपण की दूरी, पेड़ों का छत्रक, स्थानीय जलवायु, भूमि प्रकार, खाद एवं उर्वरक तथा बगीचे के रखरखाव का गहरा प्रभाव पड़ता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में बागवानी फसलों की संरक्षित खेती

प्रवीण कुमार मौर्य*, **अंकित****, **सुनील कुमार सिंह*****, **अजिताभ बोरा****** और **संजय कुमार द्विवेदी*******

बेमौसमी फल,सब्जियों एवं फूलों की अधिकतम उत्पादकता लेने एवं उनकी गुणवत्ता बनाये रखने के लिए एक ढाँचे के ऊपर पारदर्शी एवं सूर्य की पराबैंगनी किरणों की प्रतिरोधी पॉलीथीन से ढककर अंदर से सूक्ष्म वातावरण को पूरी तरह से या आंशिक रूप से नियंत्रित किया जाता है। इस तरह के ढाँचे को पॉलीहाउस या संरक्षित गृह कहते हैं। संरक्षित गृह का तापमान पॉलीथीन के कारण 5 से 10 डिग्री सेल्सियस बढ़ जाता है। इस तापमान को गर्मी एवं सर्दी में अनेक तरीकों से नियंत्रित कर सकते हैं। संरक्षित गृह के अंदर किसान एक वर्ष में तीन से चार सब्जी वाली फसलें उगा सकते हैं क्योंकि इसके अंदर के वातावरण को फसल के अनुसार नियंत्रित किया जा सकता है। संरक्षित वातावरण में खेती करने से गुणवत्तायुक्त पैदावार ली जा सकती है। इस वातावरण में रोग एवं नाशीजीवों का प्रभावी नियंत्रण भी संभव है। विपरीत मौसम (अत्यधिक पाला, कोहरा, ओला, वर्षा, ठण्डी एवं गर्म हवा आदि) से फसलों का बचाव किया जा सकता है। पॉलीहाउस के अंदर बीजों का अंकुरण व जमाव शीघ्र होता है। परिणामतः सब्जियों की पौध एवं फूल शीघ्र तैयार होते हैं।

संरक्षित खेती के अन्तर्गत पौधों को ऐसा वातावरण प्रदान करना होता है, जिसमें पौधे जीवित रहकर आसानी से वृद्धि एवं विकास कर सकें। पौधों को तापमान आर्द्रता, नमी, प्रकाश इत्यादि को उनकी आवश्यकतानुसार प्रदान करना संरक्षित खेती कहलाती है। इस पद्धति में पौधों की बढ़वार हेतु अनुकूल वातावरण देने की तकनीक प्रदान की जाती है।

उपयोगिता

यह तकनीक ग्रामीण महिलाओं एवं बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार का भी सुअवसर प्रदान करती है। संरक्षित वातावरण में कृषि, विकास व रोजगार की दिशा में एक ऐसी तकनीक है जिससे अब लघु व सीमान्त किसान भी आय वृद्धि के सुनहरे भविष्य का सपना देख सकते हैं। यह तकनीक उन क्षेत्रों के किसानों के लिए विशेषकर उपयोगी है जहाँ पानी की कमी है। अतिवृष्टि या ओले तथा आवारा पशुओं व बंदरों आदि की समस्याएँ कृषि विकास में बाधा बन रही हैं। इनके द्वारा सब्जी उत्पादन क्षमता,मुक्त वातावरण के उत्पादन से न केवल 5 से 6 गुणा तक अधिक हो जाती है बल्कि उत्पादों

प्लास्टिक लो टनल

की गुणवत्ता अति उत्तम हो जाती है। इसके अलावा समय पर नर्सरी तैयार की जा सकती है जिससे पॉलीहाउस के बाहर भी सब्जी एवं फूलों का क्षेत्रफल बढ़ाया जा सकता है।

संरक्षित वातावरण में खेती एक पूँजी सघन व्यवसाय है जिसमें प्रारम्भिक पूँजी की बहुत आवश्यकता होती है। हालाँकि 80 से 85 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है, फिर भी किसानों को प्रारम्भिक व कार्यकारी पूंजी की काफी आवश्यकता रहती है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 250 वर्ग मीटर वाले पॉलीहाउस के लिए सब्सिडी के अलावा लगभग 42 हजार रुपये प्रारम्भिक पूंजी तथा 16 से 20 हजार रुपये कार्यकारी पूंजी के रूप में खर्च करने पड़ते हैं। अतः उत्पाद के मूल्य संवर्धन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। यहाँ पर उत्पाद का मूल्य ही सम्भावित आय व लाभ का द्योतक है। इसलिए उत्पादन के साथ मण्डी पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। किसान अपने क्षेत्र की जलवायु के अनुसार नगदी फसल को अपनाकर सीमित भूमि से उत्पादकता में वृद्धि करके अपनी आय को धीरे-धीरे बढ़ा सकता है।

आवश्यकता

बदलते परिवेश, बढ़ती जनसंख्या, घटते संसाधन, सिमटती भूमि के कारण भारत की जनसंख्या को उत्तम स्वास्थ्य के लिए 300 ग्राम गुणवत्तायुक्त व रसायनों के विषाक्त से मुक्त सब्जियाँ प्रतिदिन उपलब्ध करवाने का लक्ष्य है। विभिन्न प्रकार के जैविक व अजैविक कारक (बायोटिक एवं एबायोटिक) से प्रभावित साग-सब्जियाँ लम्बी अवधि तक

*अनुसंधान सहायक,रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला, तवांग, अरुणाचल प्रदेश;** वैज्ञानिक बी, ***वरिष्ठ तकनीकी सहायक,****वैज्ञानिक, *****डी, वैज्ञानिक एवं निदेशक, रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला, डी.आर.डी.ओ. तेजपुर

उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में संरक्षित खेती के लाभ

संरक्षित खेती में पौधों की बढ़वार के लिए उपयुक्त वातावरण, वर्षभर उत्पादन, निर्यात योग्य उत्पादन, प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक उत्पादन, पौध लगाने के लिए उत्तम व्यवस्था, कीट-रोग तथा खरपतवार का उचित प्रबन्ध सम्मिलित होते हैं। संरक्षित खेती के निम्नलिखित लाभ हैं:

- बेमौसम में सब्जियाँ एवं फूल उगाकर भरपूर लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
- गुणवत्तायुक्त उत्पादन किया जा सकता है। पॉलीहाउस में उगने वाली सब्जियों एवं फूलों के आकार आदर्श प्रकृति के तथा एक समान होते हैं जिससे ग्रेडिंग व पैकिंग में काफी सुविधा होती है। इसके साथ-साथ उत्पादों के रंग में ज्यादा चमक व आकर्षण होता है।
- संरक्षित खेती में सब्जी एवं फूल उगाकर विभिन्न प्रकार के जैविक (रोग एवं कीड़े मकोड़े) एवं अजैविक (वातावरणीय कारक जैसे वर्षा, तेज धूप, प्रकाश अतिवृष्टि इत्यादि) से फसल को बचाया जा सकता है जो खुले वातावरण में संभव नही है।
- वर्ष भर (लम्बे समय तक) भरपूर लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
- सामान्य की अपेक्षा 5-10 गुना अधिक सब्जियों एवं फूलों की पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।
- गुणवत्तायुक्त रसायनों के अवशेष से मुक्त सब्जियाँ एवं फूल उत्पादित करने का एकमात्र विकल्प है।
- उच्च मानक की सब्जियों एवं फूलों की खेती करके अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है।
- पौधों के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण 24 घण्टे उपलब्ध करवाया जा सकता है।
- लागत का सही प्रयोग एवं बचत (पानी की 30-70 प्रतिशत बचत एवं उर्वरक की 40-60 प्रतिशत) का उपयुक्त माध्यम है।
- पॉलीहाउस तकनीक का प्रयोग नर्सरी बनाने में भी कर सकते हैं। सब्जियों एवं फूलों की नर्सरी बेचकर आय वृद्धि कर सकते हैं।
- आर्थिक दृष्टि से वही फसलें उगाई जानी चाहिए जिनमें कम समय में ज्यादा से ज्यादा आय अर्जित की जा सके।
- भण्डारण क्षमता पारम्परिक उत्पादों की अपेक्षा अधिक होती है। विशेषज्ञों के अनुसार सुडौल छिलका होने से इन फसलों के उत्पाद में संक्रमण भी कम होता है।
- किसान जैविक तकनीक का प्रयोग करके अपने उत्पाद को अधिक मूल्य पर बेचकर अपनी आय को दोगुना कर सकते हैं।

(वर्षभर) आवश्यकतानुसार उत्पादन देने में समर्थ हैं। इसलिए गुणवत्तायुक्त, आवश्यक मात्रा में सब्जियों एवं फलों की पैदावार बढ़ाने हेतु आज संरक्षित खेती करना अत्यन्त आवश्यक है।

पॉलीहाउस की योजना एवं निर्माण

पॉलीहाउस का निर्माण करने से पूर्व निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

- इस बात का निर्णय कर लें कि कौन से पौधे इसमें उगाने हैं। वर्ष में पॉलीहाउस का प्रयोग कब करें एवं उत्पादित फसलों को कहाँ पर बेचेंगे।
- यह भी चयन करें कि किस प्रारूप का पॉलीहाउस बनाना है।
- स्थान का चयन करना भी संरक्षित खेती का एक मुख्य पहलू है। छायायुक्त स्थान की अपेक्षा अच्छी धूप वाले क्षेत्र का चुनाव करें। ठंडे बर्फीले क्षेत्रों में ऐसी जगह का चयन करें जिसमें पॉलीहाउस की उत्तर दिशा की तरफ घर की दीवार हो (चायनीज टाइप पॉलीहाउस) जो सौर ऊर्जा को दिन में संरक्षित करके रात को अवषोशित करें।
- पॉलीहाउस कितने क्षेत्र में बनाना है, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि उसमें कितनी मात्रा में फसल को उगाना है।
- ढकने के लिए पराबैंगनी किरण स्थायीकृत चादर (शीट) का चयन करें।
- निर्माण सामग्री का चयन करके बनाएं तथा उचित दूरी पर सीमेंट तथा रेत का मिश्रण बनाकर दबाकर रिज लाइन के साथ बाँध दें।
- आखिर में प्रयुक्त होने वाली फ्रेम को हूप्स के साथ कस कर बांध दें, तदोपरान्त सीमेंट के साथ भूमि में दबा दें।
- इसकी संरचना को परख लें, नुकीले जोड़ को समतल करें एवं प्लास्टिक शीट से ढक दें।
- कवरिंग शीट को कसकर फ्रेम के आखिर में पेंच तथा स्ट्रिप से बाँध दें ताकि यह हवा से क्षतिग्रस्त न हो।
- बची हुई शीट को जमीन में दबा दें।
- पॉलीहाउस के ऊपर छायादार जाली के सही संचालन के लिए पहले और आखिरी छोर पर मोटी प्लास्टिक चादर (शीट) या डोर का प्रयोग करें।
- सामान्यतया पॉलीहाउस पूर्व दिशा में बनाएं परन्तु अधिक हवा वाले क्षेत्रों में पॉलीहाउस हवा की दिशा के समानान्तर बनाएँ।
- आदर्श पॉलीहाउस का निर्माण करें जिसमें दोहरा दरवाजा, साइड वेन्टीलेशन, पर्याप्त टॉप वेन्टीलेशन, टपक विधि द्वारा सिंचाई, फॉगर या मिस्टर, 50 मैश यू.वी. स्टैब्लाइज्ड नायलॉन की जाली व बाहर या अंदर से 50 प्रतिशत यूवी. स्टैब्लाइज्ड छायादार जाले आदि घटक आवश्यक हैं। यदि किसान उपरोक्त

इजरायली टाइप पॉलीहाउस

छः घटकों को पॉलीहाउस निर्माण में सुनिश्चित करें तो अधिकतर समस्याओं का निदान आसानी से कर सकते हैं।

संरक्षित खेती के अंतर्गत संरचना के प्रकार

संरक्षित खेती के अंतर्गत वातावरण को नियंत्रित करने वाले कारक के आधार पर संरक्षित वातावरण कई प्रकार के होते हैं, जिनका विस्तृत वर्णन निम्नलिखित है:

ग्रीन हाउस/पॉलीहाउस (फाइटोट्रानिक प्रकार)

इस प्रकार के ग्रीन हाउस में विभिन्न वातावरणीय कारक जैसे तापमान, आर्द्रता, वायु संचार, प्रकाश इत्यादि को नियंत्रित करने के लिए स्वचालित उपकरण लगे होते हैं जिनका नियंत्रण कम्प्यूटर द्वारा किया जाता है। इसके अलावा इसमें उगाये गये पौधों की बढ़वार एवं फूलने एवं फलने की कार्यिकी को नापने के लिए भी यंत्र लगे रहते हैं। इस तरह के पॉलीहाउस बहुत महंगे होते हैं अत: इसमें निर्यात के लिए उगाई जाने वाली फसलें जैसे अल्प प्रचलित एवं कीमती फल, सब्जी एवं फूलों को ही उगाया जाता है ताकि किसान भाइयों को अच्छी आय प्राप्त हो सके। यह संरक्षित विधि अपेक्षाकृत अधिक महंगी होती है परन्तु इसमें कुछ बातें ध्यान में रखें तो निश्चित ही थोड़े समय बाद आय बढ़ने लगती है। कुछ समय बाद किसानों की लागत निकल आती है एवं समय बीतने के साथ आय भी बढ़ने लगती है।

इस प्रकार के पॉलीहाउस को साधारण जी. आई. पाइप के ऊपर पराबैंगनी किरण स्थिरीकृत (अल्ट्रावॉयलेट स्टेबिलाइज्ड) पॉलीथीन (80 गेज) की चादर से बनाया जाता है। वायु संचार के लिए वायु निकास पंखा (एक्जास्ट फैन) लगाया जाता है। इसके साथ ही पैड एवं फैन सिस्टम का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के पॉलीहाउस हमारे देश में जाड़े की सब्जियों को उगाने के लिए उपयुक्त हैं। इसमें तापक्रम 5-7 डिग्री सेंटीग्रेड तक नियंत्रित किया जा सकता है।

पलवार (पॉलीथीन मल्च)

खेत में पालीथीन का प्रयोग पलवार के रूप में करते हैं ताकि तापमान नियंत्रित कर सकें। जमीन की सतह से पानी उड़ने से बचाने (वाष्पोत्सर्जन), खरपतवार नियंत्रण, कीड़े-मकोड़ों से बचाव पौधों को मृदा में पाये जाने वाले जीवाणु रोगों से बचाया जाता है। खेत में पलवार बिछाकर किसान अपनी लागत में कमी ला सकता है एवं उत्पादन में गुणवत्ता के साथ उपज बढ़ाकर दोगुनी आय प्राप्त कर सकता है।

सारणी-1: चायनीज टाइप पॉलीहाउस में उत्पादन का कार्यकाल

सब्जियाँ	उगाने का उपयुक्त समय
पालक, पत्तागोभी, चाइनीज पत्तागोभी लेट्यूस एवं केल आदि	15 दिसंबर से 15 अप्रैल
सब्जियाँ एवं वार्षिक फूल पौधशाला	15 अप्रैल से 1 मई
रंगीन शिमला मिर्च (हरी, लाल, पीली एवं नारंगी)	मई से नवंबर

चायनीज टाइप पॉलीहाउस

चायनीज टाइप पॉलीहाउस का आकार 100×20 फीट होता है। इस प्रकार के

सारणी-2: ट्रेंच तकनीक द्वारा उत्पादन का उपयुक्त समय

सब्जियाँ	उगाने का उपयुक्त समय
पालक	15 जनवरी से 15 अप्रैल
सब्जियाँ एवं एकवर्षीय पुष्प पौधशाला	15 अप्रैल से 1 मई
कद्दूवर्गीय सब्जियाँ, टमाटर, पालक	जून से नवंबर

पॉलीहाउस का व्यावसायिक स्तर पर उपयोग मुख्य रूप से लद्दाख क्षेत्र में किया जाता है। यह पॉलीहाउस जाड़े के महीने में सब्जी उत्पादन हेतु उपयुक्त है। जाड़े के मौसम में पॉलीहाउस में पालक की 20 कटिंग ले सकते हैं। इसके अलावा पत्तागोभी के फल 800-2000 ग्राम भार के फरवरी माह के अंत तक तैयार कर लेते हैं। शिमला मिर्च आदि उच्च मूल्य सब्जियों की भी खेती करते हैं। पॉलीहाउस में सब्जियों की पौध भी तैयार कर सकते हैं। मूल्यवान फसल के रूप में स्ट्रॉबेरी की खेती अधिक लाभप्रद हो सकती है। परिणामस्वरूप किसान अपनी आय में वृद्धि करते हैं। सारणी-1 में इस प्रकार की संरचना में खेती करने के समय का वर्णन है।

ट्रेंच तकनीक

यह तकनीक बहुत पुरानी है एवं यह सस्ती भी है। ट्रेंच तकनीक द्वारा सब्जियों का उत्पादन अधिक ठंडे प्रदेशों में किया जाता है। ट्रेंच विधि द्वारा चार कक्ष जमीन के अंदर बनाये जाते हैं। प्रत्येक कक्ष का आकार 6 मी.×4 मी.×1.5 मी. के बराबर होता है। जमीन की सतह पर पॉलीथीन की चादर से इन्हें ढक देते हैं ताकि इनको सुरक्षित रखा जा सके। इसके निर्माण के लिए अधिक विशेषज्ञता की आवश्यकता नहीं होती है। इसका रखरखाव भी बहुत सरल है। इसके निर्माण में लागत बहुत कम लगती है। संरक्षित खेती में यह विधि बहुत सस्ती एवं टिकाऊ है। इस तकनीक द्वारा निर्मित कक्ष में ऊर्जा एवं ताप की खपत बहुत कम होती है। तेज हवाएँ इसको किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचाती है जिसके फलस्वरूप इसकी पॉलीथीन अधिक समय तक चलती है। यह संरक्षित संरचना ठंडे क्षेत्रों के लिए अनुमोदित की गई है। इस ट्रेंच संरचना द्वारा सब्जियों की पौध अगेती एवं पहले तैयार हो जाती है। इसके द्वारा किसान भाइयों को पौधशाला से ही आय हो जाती है। ■

प्लास्टिक लो टनल तकनीक

प्लास्टिक लो टनल तकनीक द्वारा किसान बेमौसमी (ऑफ सीजन) सब्जियों का उत्पादन करके बाजार में वर्ष भर सब्जियों को उपलब्ध करवा सकते हैं। इस प्रकार सब्जियों को अच्छे भाव पर बेचकर अपनी आय को बढ़ा सकते हैं। यह तकनीक सस्ती एवं कम खर्चीली है। लो टनल द्वारा खेती करने के बहुत लाभ हैं- जैसे प्रतिकूल वातावरण में फसल को सुरक्षा प्रदान करता है एवं साथ ही इन फसलों को 20-25 दिन पहले तैयार होने में मदद करता है। फलस्वरूप किसान की फसल मुख्य समय से पहले बाजार में उपलब्ध हो जाती है और उचित मूल्य मिलता है। लो टनल तकनीक द्वारा पौधशाला में पौधे स्वस्थ एवं अगेती (पहले) तैयार हो जाते हैं। इस विधि द्वारा किसान ने समर स्क्वैश (जुकीनी) का उत्पादन दोगुना किया है एवं अधिक लाभ कमाया है। उत्पादन की विस्तृत जानकारी सारणी-3 में निम्नलिखित है:

सारणी-3: प्लास्टिक लो टनल में सब्जी उत्पादन का उपयुक्त समय

सब्जियाँ	उगाने का उपयुक्त समय
लहसुन, चाइनीज पत्तागोभी	15 जनवरी से 15 अप्रैल
सब्जियाँ एवं उनकी पौधशाला	15 अप्रैल से 15 मई
कद्दू वर्गीय सब्जियाँ	मई से नवंबर

जानकारी

मई-जून में किये जाने वाले बागवानी कार्य

हरे कृष्ण*, **अरविंद कुमार सिंह**** और **रामकेश मीणा*****

हमारे देश में सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई, पंथीय, जैविक इत्यादि विविधताओं के साथ ही ऋतुओं में भी व्यापक भिन्नता पायी जाती है। ये छः ऋतुएँ क्रमवार एक के बाद एक आती रहती हैं। इसी क्रम में वसंत ऋतु की समाप्ति के साथ ही ग्रीष्म ऋतु प्रारम्भ हो जाती है। ग्रीष्म ऋतु मई-जून के महीनों में होती है जिसका व्यापक प्रभाव कृषि कार्यों पर पड़ता है। इस ऋतु के दौरान देश के पूर्व-पश्चिमी तटीय मैदानी भागों में मानसून-पूर्व वर्षा होती है, जिसे 'मैंगो शावर' भी कहा जाता है। यह वर्षा आम के फल की वृद्धि के लिए लाभदायक होती है। इसी अवधि में उत्तर-पश्चिमी शुष्क क्षेत्रों में 'लू' भी चलती है, जिससे छोटे पौधों अथवा नवस्थापित बागों को बचाना अति आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त, इस अवधि में जहां आम, अंगूर, चीकू, पपीते, लीची इत्यादि के तैयार हुए फलों को तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था भी करनी होती है, वहीं शीतोष्णवर्गीय फलों जैसे सेब, नाशपाती, आड़ू, आलूबुखारा आदि में फल लगने एवं फल वृद्धि की क्रियाएं भी शुरू हो जाती हैं। इसी प्रकार, शुष्कवर्गीय फल बेर में काट-छांट, खजूर में फलों का विरलीकरण और अनार में बहार नियंत्रित करने की प्रक्रिया करनी होती है। इसी संदर्भ में अधिक जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

आम की मिठास, भुला दे गर्मी का अहसास

आम लाए समृद्धि और सम्मान, फलों का रखें विशेष ध्यान

मानसून के आगमन से पूर्व, नए बाग लगाने के लिए मई माह में उचित दूरी पर बाग के रेखांकन (निशान लगाने) के बाद गड्ढे खोद लेने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए। नर्सरी में बीजू पौधों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए एवं खरपतवार निकाल देने चाहिए। पकते हुए फलों का पक्षियों आदि से बचाव करना चाहिए। फलों की आंतरिक सड़न रोकने के लिए बोरेक्स (4 कि.ग्रा./100 लीटर) का छिड़काव करना चाहिए। फल मक्खी के प्रकोप से फलों को बचाने के लिए मिथाइल यूजीनॉल (0.1 प्रतिशत) एवं मैलथिऑन (0.1 प्रतिशत) के रासायनिक पाश का प्रयोग करें। कैंकर व्याधि से बचाव हेतु स्ट्रेप्टोमाइसिन (200 पी पी एम) का छिड़काव करें। फलों की अच्छी बढ़वार के लिए आवश्यकतानुसार 7-10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

जून में नीचे गिरे फलों को इकट्ठा कर लेना चाहिए तथा इन्हें स्थानीय बाजारों में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। पेड़ों के नीचे की जमीन साफ-सुथरी रखनी चाहिए और यदि अगेती किस्म के फल पक गए हों तो उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करें। फलों की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु, तुड़ाई के तुरंत बाद फलों की डीसैपिंग (डंठल से होने वाले स्राव को पृथक करना) आवश्यक है। फलों को तोड़ते समय 10 मिमी की शाखा के साथ उन्हें प्रातः या सायंकाल में ही तोड़ना चाहिए। बौनी किस्मों में फसल की तुड़ाई सिकेटियर द्वारा तथा ओजस्वी किस्मों में 'मैंगो हार्वेस्टर' का उपयोग करना चाहिए। तुड़ाई के दौरान विभिन्न किस्मों के फलों को एकसाथ मिश्रित नहीं करना चाहिए। किस्मवार फलों का श्रेणीकरण करना चाहिए, जिससे बाजार में फलों का उचित मूल्य प्राप्त हो सके। तुड़ाई उपरांत होने वाले रोगों तथा फलों को एक समान रूप से पकाने के लिए कार्बेण्डाजिम (0.5 ग्राम प्रति लीटर) और ईथरेल (700 पीपीएम) के घोल को गुनगुने पानी (52±1 डिग्री सेल्सियस) में तैयार कर फलों को 5 मिनट के लिए उपचारित करें।

केले प्रवर्धकों का सही चुनाव, धूप से करें उनका बचाव

मई में भी एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। अवांछित पत्तियों को निकाल देना चाहिए। फलों के गुच्छों को धूप से बचाने के लिए पत्तियों से ढक देना चाहिए। नए बाग लगाने कें लिए रेखांकन के

*भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश-221305;**केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र, (केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान), वेजलपुर (गोधरा), गुजरात-389340; ***भाकृअप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006

खाएं अमरूद, रहें दुरुस्त

पश्चात 45x45x45 सेंमी. आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। जून के अंतिम सप्ताह में खोदे गए गड्ढे को गोबर की खाद, उर्वरक व मृदा बराबर मात्र में मिलाकर ऊपर तक भरें। नीम की खली (250 ग्राम प्रति गढ्डा) तथा स्यूडोमोनास (25 ग्राम) सूक्ष्मजीवियों का प्रयोग भी लाभदायी होता है। गड्ढों में मिट्टी भरने के तुरंत बाद पानी अवश्य देना चाहिए ताकि मृदा बैठ जाए। पुराने बागों में जिन पत्तियों पर धब्बे वाला रोग दिखे, उन्हें काटकर मृदा में गहरा दबा दें या जला दें तथा कवकनाशी ब्लिटाक्स-50 का 0.3 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) घोल कर छिड़काव करें। उकठा रोग की रोकथाम के लिए कंदों को एग्नॉल से उपचारित करें।

यह समय केला की रोपाई के लिए उपयुक्त होता है। रोपण हेतु तीन माह पुरानी, तलवारनुमा, स्वस्थ व रोगमुक्त पत्ती वाली अधोभूस्तारियों (स्वोर्ड सकर्स) का ही प्रयोग करें। चौड़ी पत्तियों वाले अधोभूस्तारी (वॉटर सकर्स) देखने में तो मजबूत लगते हैं लेकिन आन्तरिक रूप से ये कमजोर होते हैं। अतः, प्रवर्धन हेतु इनका प्रयोग वर्जित है। रोपण के समय कन्द का औसत वजन लगभग एक से डेढ़ किलोग्राम होना चाहिए। रोपण पूर्व पत्तियों को ऊपरी तने के कन्द से 25-30 सेंमी. पर काट दें। रोपाई से पूर्व सभी पत्तियों को (एक ग्राम बाविस्टीन प्रति लीटर पानी के घोल में) उपचारित कर लें। रोपाई के समय केवल कन्द भाग को ही मिट्टी में दबाएं तथा रोपाई के बाद सिंचाई कर दें। इसके अतिरिक्त, खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए थालों में धान के पुआल अथवा गन्ने की पत्ती की 8 से 10 सेंमी. मोटी पर्त बिछानी चाहिए। इससे खरपतवार की वृद्धि रुकती है तथा सिंचाई की आवश्यकता भी कम हो जाती है। जैविक पलवारों के अपघटन से भूमि की उर्वरा शक्ति भी बढ़ जाती है जिससे उपज में भी वृद्धि होती है।

जब हो अमरूद में फलन, तब करें पूरा जतन

अप्रैल-मई के महीने फल के विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि गर्मियों में आमतौर पर वातावरण निरंतर शुष्क होता जाता है, इससे मृदा में पानी की कमी होने लगती है। अतः उचित समय पर सिंचाई नही होने पर फलों की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है जिसके परिणामस्वरूप वो छोटे रह सकते हैं। इसलिए 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई कर दी जानी चाहिए। मई माह में, यदि बगीचों में फल-मक्खी अथवा अन्य कीटों का प्रकोप हो तो क्विनाल्फॉस 25 ईसी का 2 मि.ली. प्रति लीटर या मेलाथियान 50 ईसी का 1 मि.ली. प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यूएससी 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से या 3 प्रतिशत नीम तेल का छिड़काव करें। छिड़काव प्रातःकाल या देर शाम में 21 दिनों के अंतराल पर कम से कम चार बार किया जाना चाहिए। जून माह में नए अमरूद के बागों की स्थापना के लिए, खेत को भली-भांति तैयार करें। पौधे लगाने के लिए गड्ढों को 3x3 मीटर दूरी पर खोदा जाना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे को 10 किलो गोबर की सड़ी खाद, 1 किलो नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मिट्टी के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। पौधों में पोषक तत्व की कमी हो जाने पर पत्तियां छोटी एवं पीली लगती हैं। इसके नियंत्रण के लिए आधा किलो जिंक सल्फेट और आधा किलो बुझे हुए चूने का घोल 100 लीटर पानी में बनाकर इसका छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर 2-3 बार करना चाहिए।

जब व्याधि रहे दूर, अंगूर उत्पादन दे भरपूर

नई बेलों में सिंचाई 10-15 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। मई के अंत तक तैयार परलेट और ब्यूटी सीडलैस किस्मों के तैयार गुच्छों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए तथा जब किस्में पकनी आरंभ हो गई हों तो उनमें सिंचाई बंद कर देनी चाहिए, अन्यथा फलों में ठोस घुलनशील पदार्थों की अत्यधिक कमी आती है एवं फल फटने लगते हैं। ऐसे फलों को बाजार में बेचना कठिन होता है। यदि एन्थ्रेक्नोज (श्याम व्रण) का प्रकोप हो तो बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर दो बार करना चाहिए। चूर्णिल फफूंद की रोकथाम के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत), डीनोकैप (0.25 मिली/लीटर) के घोल का छिड़काव अथवा सल्फर की धूल का प्रयोग करना चाहिए। इन महीनों में थ्रिप्स का भी प्रकोप कहीं-कहीं रहता है। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान के 500 मि.ली. प्रति 500 लीटर पानी में घोल का छिड़काव करना चाहिए। जून माह में,

रस से परिपूर्ण अंगूर

जब गर्मी सताए, चीकू खूब लुभाए

मृदुल आसिता से बचाव हेतु मुख्य तने के समीप से निकलने वाली सभी शाखाओं को निकाल देना चाहिए तथा ट्रेलिस से लटकने वाली अतिरिक्त शाखाओं को सुतली से बांध देना चाहिए ताकि मिट्टी से उनका स्पर्श हो पाये। इसके अतिरिक्त बोर्डो घोल (0.5 प्रतिशत) अथवा कॉपर ऑक्सी क्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करें। तुड़ाई से 8-10 दिनों पूर्व 50-100 पीपीएम नेप्थलीन एसिटिक एसिड के छिड़काव से फलों का गिरना कम हो जाता है तथा निधानी जीवन में भी बढ़ोत्तरी देखी गयी है।

सही समय पर करें तुड़ाई, चीकू दे अच्छी कमाई

मई के महीने में जब, कड़ी धूप हो, बगीचे की गहरी जुताई करें। लगभग 15 दिनों तक बगीचे की खाली जगह में धूप आने दें। ऐसा करने से कीटों के अंडे नष्ट हो जाएंगे तथा बाग में ज्यादा कीटनाशियों के छिड़काव से बचा जा सकेगा। इस समय बाग में सिंचाई बिलकुल न करें। नए बाग लगाने हेतु 60x60x60 सेंमी या 100x100x100 सेंमी आकार के गड्ढे क्रमशः 9x9 (बलुई मृदा में) अथवा 10x10 मीटर (भारी मृदा में) की दूरी पर तैयार करें। जून माह में गड्ढों को सतही मृदा, 50 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 किलोग्राम सुपर फॉस्फेट और 1 किलोग्राम नीम खली से भरें। नए बाग लगाते समय मानकीकृत किस्में लगाएँ। स्थापित बागों में 5-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। इस दौरान गुड़ाई करने से मृदा की नमी संरक्षित करने में भी सहायता मिलती है। बाग में मैग्नीशियम, सल्फर, बोरॉन, लौह, जिंक तत्वों की पूर्ति के लिए क्रमशः 1 प्रतिशत मैग्नीशियम नाइट्रेट, 1 प्रतिशत कैल्शियम सल्फेट, बोरक्स (5 किलो प्रति हैक्टर), फेरस सल्फेट (0.5 प्रतिशत) व जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) डालें। बाग में नाइट्रोजन, पोटेशियम और फॉस्फोरस के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की मिट्टी में कमी के प्रति सजग रहें। किसी भी खाद को डालने से पहले मिट्टी की जांच निकटतम संस्था से अवश्य करवाएं और जरूरत के अनुसार ही प्रयोग करें। भारत सरकार द्वारा विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, राज्य सरकारों के अंतर्गत मृदा प्रयोगशालाओं में, मृदा की जांचकर मृदा स्वास्थ्य कार्ड (सॉइल हेल्थ कार्ड) बनाए जा रहे हैं। फरवरी-मार्च में विकसित फूलों से फल मई-जून के दौरान तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। जब फलों का रंग (नारंगी या आलू जैसा रंग) फीका पड़ जाए अथवा फलों से चिपचिपा दूधिया स्राव कम हो जाए और पेड़ों से आसानी से टूट जाए तो समझ लेना चाहिए कि फल तुड़ाई के लिए तैयार हैं। तुड़ाई पश्चात फलों का छोटे, मंझोले और बड़े आकार के आधार पर श्रेणीकरण करें। भंडारण से पूर्व जिबरेलिक अम्ल (300 पीपीएम) अथवा कार्बेण्डाजिम (1000 पीपीएम) से उपचार लाभदायी रहता है।

पपीता है तैयार, बाजार भेजो इस बार

मई में बाग का रेखांकन करने के बाद गड्ढे भरने का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पछेती किस्मों के तैयार फलों को बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। नर्सरी में लगे छोटे-छोटे पौधों को गर्मी से सुरक्षा की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। अतः नर्सरी पर छप्पर डाल दिया जाए तो अच्छा रहता है। नर्सरी के पौधों की साप्ताहिक अंतर पर सिचाई की नियमित व्यवस्था आवश्यक है। बाग में लगे पौधे को तीन तरफ से घास या पुआल से ढक दिया जाए तो अच्छा रहता है। जून के महीने में नर्सरी पौधों को निकालकर बाग में रोपित कर देना चाहिए एवं उसके तुरंत बाद सिंचाई करना अति आवश्यक है। पुराने बागों की बजाय नये बागों में पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

अनार में बहार, लाए समृद्धि अपार

उत्तर-पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्रों में, जहां सिंचाई के सीमित संसाधन उपलब्ध हैं, उन क्षेत्रों में मृग बहार पसंद की जाती है। जबकि महाराष्ट्र के सिंचाई क्षेत्रों में अम्बे बहार को पसंद किया जाता है। मृग बहार वाले क्षेत्रों में अप्रैल-मई माह से ही खेतों में सिंचाई रोक दी जाती है। सिंचाई रोकने के 45 दिनों के बाद पौधों की हल्की छँटाई करनी चाहिए। छँटाई के तुरंत पश्चात, उर्वरकों की संस्तुत खुराक और सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए। सामान्यतः, अनार के पौधों में 10-15 किग्रा गोबर की सड़ी खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 125 ग्राम पोटेशियम प्रति वर्ष प्रति वृक्ष देना चाहिए। खाद एवं उर्वरकों का उपयोग पौधों के छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सेंमी गहरी खाई बनाकर देना चाहिए। यह पुष्पण और फलन की अभिवृद्धि करता है। वैकल्पिक रूप से सिंचाई रोकने के 45 दिन

अनार है लाभकारी, भगाए सारी बीमारी

बाद, पत्तियों को गिराने के लिए, ईथरेल 1000 पीपीएम, प्रोफेनोफॉस 2 मिली. प्रति लीटर, मेटासिड 2 मिली. प्रति लीटर, थायोयूरिया 3 ग्राम प्रति लीटर या यूरिया फॉस्फेट 5 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं लिया जाना चाहिए अन्यथा मई के तीसरे सप्ताह से जून के आखिरी सप्ताह एवं इसके बाद भी रासायनिक जैवनाशियों का प्रति सप्ताह प्रयोग करें। जून माह से ही फलबेधक कीट का प्रकोप भी बढ़ जाता है। इससे बचाव हेतु फलों को थैलियों से ढंक दें तथा एजाडिरेक्टिन 1500 पीपीएम (3 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करें। मृदा का सौरीकरण मई-जून की द्विमाही में कर लेना चाहिए, जिससे हानिकारक कीट, फफूंद एवं खरपतवार के बीज नष्ट हो जाएँ। मानसून के दौरान अनार के नए बाग लगाने हेतु, रेखांकन एवं गड्ढे खोदने का कार्य भी मई-जून माह में ही पूर्ण कर लेना चाहिए। सामान्यत: 4-5 मीटर की दूरी पर अनार का रोपण किया जाता है। पौध रोपण के एक माह पूर्व 60x60x60 सेंमी आकार के गड्ढे खोद कर 15 दिनों के लिए खुला छोड़ दें। तत्पश्चात गड्ढे की ऊपरी मिट्टी में 10-15 किग्रा गोबर की सड़ी खाद, 1 किग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट, 50 ग्राम क्लोरोपायरीफास चूर्ण मिट्टी में मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सेंमी ऊंचाई तक भर दें। गड्ढे भरने के बाद सिंचाई करें ताकि मिट्टी भली-भांति बैठ जाए।

फलन का रखें समुचित ध्यान, नीबूवर्गीय फल भरें धन-धान्य

नए बाग लगाने हेतु मई में बाग का रेखांकन करके गढ्डे खोद लेने चाहिए। पौधशाला के पौधों की नियमित सिंचाई, गुड़ाई और निराई करते रहना चाहिए। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। मौसम में अधिक तापमान व बढ़ती गर्मी के कारण फलों की बढ़वार रुक सकती है एवं फलों का गिरना एक प्रमुख समस्या होती है। अत: 2, 4 डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करना काफी लाभदायक रहता है। जून के अंत में खोदे गए गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक और मृदा को बराबर मात्रा में मिलाकर भर देना चाहिए तथा भरने के पश्चात सिंचाई अवश्य करनी चाहिए ताकि मिट्टी बैठ जाए। जल निकास नालियों को साफ कर देना चाहिए। फलदार पौधों में नाइट्रोजन एवं पोटाश की दूसरी मात्रा को इसी माह देना लाभदायक रहता है। नीबू में एक वर्ष के पौधे में 25 ग्राम नाइट्रोजन व 25 ग्राम पोटाश, जो क्रमश: बढ़कर 10 वर्ष या उससे अधिक आयु के पौधे के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन व 250 ग्राम पोटाश हो जाएगी, का प्रयोग इस माह या फल लगने के दो माह बाद करें। जस्ते की कमी दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट या आवश्यकतानुसार अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव करें।

बाजार में छाएगी बहार, जब लीची की होगी भरमार

मई में पौधों की 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए ताकि फलों में नियमित वृद्धि होती रहे। अन्य फलों की भांति लीची बाग का रेखांकन भी मई माह में ही कर लेना चाहिए। रेखांकन उपरांत, 3x3x3 फुट आकार के गड्ढे खोद लें व उन्हें एक महीने बाद गोबर की खाद, रासायनिक खाद व मिट्टी की बराबर मात्रा से भर लेना चाहिए। कुछ किस्मों के फल मई में पकना शुरू हो जाते हैं उन्हें बर्रों से बचाना चाहिए। तैयार फलों को सुबह या शाम को तोड़कर भेजने की समुचित व्यवस्था आवश्यक है। फलों के पकने के समय उनके फटने की समस्या लीची में अत्यधिक है। पौधे में नियमित सिंचाई करते रहना चाहिए अन्यथा मई व जून के महीनों में अचानक वर्षा होने या सिंचाई करने से फलों के फटने की अत्यधिक समस्या आएगी। यदि फिर भी फल फटें तो पौधों पर समयानुसार जिब्रेलिक अम्ल (4 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव काफी लाभदायक रहता है। जिंक सल्फेट के 1.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर फल की निंबोली अवस्था से फलों की तुड़ाई तक करने पर भी फलों के फटने (चटकने) की समस्या काफी कम हो जाती है। माईट के प्रकोप को कम करने हेतु डाइमिथोएट (100 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव लाभकारी रहता है। लीची में गूटी बांधने का कार्य जून के दूसरे पखवाड़े में करें। इसमें मिलीबग की रोकथाम के लिए थालों में 2 प्रतिशत कीटनाशी धूली डालकर गुड़ाई कर दें।

स्वाद और सुवास, हैं लीची में एक साथ

अबकी बार, फालसा चला बाजार

इस द्विमाही खेत की गहरी जुताई करें ताकि कीटों के प्यूपे और खरपतवार के प्रवर्धक नष्ट हो जाएँ। जून माह में, बाग के आस-पास यदि क्लेरोडेंड्रोन इन्फ्लोर्चुनेटम नामक खरपतवार उगी हो तो, उसे नष्ट करें। यह पौधा मिलीबग कीट को पनपने के लिए आश्रय देता है। फालसे के फलों की उचित बढ़वार हेतु 15 दिन के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करते रहना चाहिए। फालसे में फलों का पकना अप्रैल के अंतिम सप्ताह में शुरू हो जाता है जो जून के प्रथम सप्ताह तक जारी रहता है। इसके फल अत्यंत नाजुक होते हैं। अत: इनकी तुड़ाई सुबह या शाम में करनी चाहिए और तुरंत बाद फलों को बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करें।

फालसा स्वाद, मन में बसा

आंवले को ना हो कोई कमी, बनाएं रखें उचित नमी

पौधरोपण के लिए गड्ढे जून में खोदते हैं तथा गड्ढे की दूरी किस्म के अनुसार 8-10 मीटर रखते हैं। जून माह में, 1x1x1 मीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए जिन्हे 15 दिनों के बाद 10 किलो गोबर की सड़ी खाद, 1 किलो नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मिट्टी के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। चूँकि आंवले में स्वयं-बंध्यता पाई जाती है अत: कम से कम दो किस्में अवश्य लगाते हैं जो एक दूसरे के लिए परागणकर्ता का कार्य करती हैं। चूंकि आंवला एक पर्णपाती वृक्ष है अत: इसके पेड़, फल लगने के बाद, गर्मियों के मौसम में सुप्तावस्था में प्रवेश कर जाते हैं और मानसून आने तक उसी अवस्था में

औषधीय गुणों का खजाना है आंवला

रहते हैं। इसलिए पौधों को गर्मियों के दौरान, अन्य फसलों की तुलना में, ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। हालांकि 10-15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई लाभकारी होती है। एकांतरित दिनों पर, ड्रिप से सिंचाई फलों के विकास और आंवला की उपज की बढ़ोतरी के लिए उपयोगी पाया गया है। इसके अतिरिक्त, इससे खरपतवार भी कम उगते हैं। मई-जून की गर्मियों में, मृदा में नमी संरक्षण के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों जैसे धान के भूसे, स्थानीय घास, केले के पत्ते या गन्ने के कचरे पलवार के रूप में 20 किलोग्राम प्रति वृक्ष की दर से थालों में बिछा सकते हैं। इस पलवार को 10-15 सेंमी मोटाई तक एकरूप ढंग से वितरित किया जाना चाहिए। यदि पॉलीथीन पलवार उपयोग करना हो तो, 100 माइक्रॉन मोटी फिल्म प्रयोग कर सकते हैं।

बेर के बागान को भायी, कटाई-छँटाई, उर्वरण व सिंचाई

देश के उत्तरी और पश्चिमी भागों में कटाई-छंटाई का काम मई-जून (वैशाख-ज्येष्ठ) का महीना, जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती हैं तथा पेड़ सुषुप्तावस्था में हों, सबसे उपयुक्त माना जाते है। छोटे पौधों में 60-90 सेंमी. तक की ऊंचाई तक तने पर निकलने वाली शाखाओं को काट देना चाहिए और किसी लकड़ी अथवा बांस के सहारे सीधा करना चाहिए। बड़े वृक्षों की चटकी, टूटी और जमीन को छूती शाखाओं को छांट देना चाहिए। एक दूसरे से मिली हुई शाखाओं को भी काट देना चाहिए। छंटाई का कार्य जहां तक संभव हो सके मई में पूरा कर लेना चाहिए। कटाई-छंटाई करते समय, सामान्यत: पिछले वर्ष की शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एंव द्वितीय शाखाओं की 15-20 कलियां काट देने पर मजबूत एंव ओजस्वी शाखाएं निकलती हैं। बीमारियों के प्रकोप से बचाव के लिए शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर फफूंदीनाशी (नीला थोथा या ब्लाइटॉक्स-50) का लेप कर देना चाहिए। काट-छांट के लिए तेज धार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए ताकि शाखा क्षतिग्रस्त न हो। जून अत्यधिक गर्म रहता है। पेड़ों में जब तक फुटाव न हो तब तक सिंचाई नहीं करनी चाहिए। जिन वृक्षों में छंटाई का कार्य रह गया हो, उनमें जून के प्रथम सप्ताह तक यह कार्य पूरा कर लेना चाहिए। छंटाई के पश्चात कटी हुई लकड़ियों और शाखाओं को हटा कर साफ करना चाहिए। गर्मी में एक-दो बार पेड़ों के नीचे जुताई कर देने पर हानिकारक कीड़े-मकोड़ों के अंडे तथा प्यूपे नष्ट हो जाते हैं। पौधों के मुख्य तनों के चारों ओर 60 सेंमी. तक की दूरी का घेरा छोड़कर पेड़ का बाहरी घेरा बनाया जा सकता है तथा इसको पानी में नाली से जोड़ देना चाहिए। बेर में एक साल के पौधे के लिए 5 किग्रा गोबर/कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फेट व 25 ग्राम पोटाश तथा यही मात्रा क्रमश: बढ़ाकर 8 या उससे अधिक उम्र के पौधे के लिए 40 किग्रा गोबर की खाद, 400 ग्राम नाइट्रोजन, 400 ग्राम फास्फेट व 200 ग्राम पोटाश प्रति पौधे की दर से प्रयोग करें।

इस ऋतुकाल, खजूर करेगा मालामाल

नए बाग लगाने के लिए, गड्ढे जून में खोदते हैं तथा गड्ढ़े की दूरी किस्म के अनुसार 6-8 मीटर रखते हैं। फल सेट होने के बाद मई माह में, गुच्छों के मुख्य डंठल को नीचे की ओर मोड़ देते हैं ताकि ये बिना पत्तियों के मध्य शिरा को छुए नीचे लटकती रहें। इससे बढ़ते फलों के वजन से डंठल के टूटने का खतरा कम होता है और साथ ही पत्तियों के मध्य शिरा की रगड़ से फलों को होने वाला नुकसान भी कम होता है। मई के अंतिम सप्ताह से जून के प्रथम सप्ताह तक फलों के विरलीकरण का कार्य भी पूरा कर लेना चाहिए। यह आमतौर पर या तो एक गुच्छे पर लगे फलों की संख्या को कम कर या कुछ गुच्छों को हटाने के द्वारा पूरा किया जाता है। पौधे की उम्र तथा किस्म के आधार पर, प्रति पौध 5 से 10 गुच्छों या 1300 और

खजूर का बाग लगाने की तैयारी

सेब का सेवन, पाएँ आरोग्य जीवन

1600 फलों को बनाए रखा जाना चाहिए। इसके पश्चात, प्रत्येक गुच्छे के केंद्र से एक तिहाई फलों की लड़ियों को काटकर अलग कर देना चाहिए जिससे फल जल्दी पकते हैं तथा उनकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

फलों की छँटाई अथवा विरलीकरण की तीव्रता खद्रावी किस्म में 40-50 प्रतिशत, जैदी और बरही में 50-60 प्रतिशत तथा हलावी किस्म में 50-55 प्रतिशत तक होनी चाहिए। मई-जून माह के दौरान, बागों में सिंचाई की नियमित रूप से व्यवस्था होनी चाहिए। चूंकि जून के अंत से फल डोका अवस्था में आने लगते हैं, अत: उन्हे जैवनिम्नीकरणीय प्लास्टिक की चादरों से ढक देना चाहिए, ताकि संभावित वर्षा से होने वाले नुकसान से फलों को बचाया जा सके। पक्षियों से होने वाले नुकसान को रोकने के लिए, फलों को लोहे की जालियों से भी ढकते हैं। जून के तीसरे से चौथे सप्ताह में अगेती प्रजातियों जैसे नागल, मस्कट, तायर, सायर, हलावी, खूनैजी में तुड़ाई प्रारम्भ कर सकते हैं। इनमें अधिकांशत: फल डोका अवस्था में पहुँच जाते हैं। इन फलों को ताजे फलों के रूप में या प्रसंस्करण के बाद छुहारा बनाने में प्रयोग में लाया जा सकता है।

यह द्विमाही बीते अच्छा, सेब की करें पूर्ण सुरक्षा

तनों की छाल को गर्मी से बचाने के लिए घास से बांध देना चाहिए। इस मौसम में अपस्थानिक शाखाएं (सकर) भी बहुत निकलती हैं। ये पौधों से अधिकाधिक पोषक तत्व लेती हैं। अत: इनको जल्द से जल्द हटा देना चाहिए। इस मौसम में फलों का गिरना भी प्रमुख समस्या है। इसे रोकने के लिए नेफ्थालीन एसिटिक अम्ल (10 पीपीएम) का छिड़काव फलों के लगने के चार से पांच सप्ताह बाद करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, फलों से लदी शाखाओं को बांस-बल्ली द्वारा उचित सहारा प्रदान करने की भी व्यवस्था करनी चाहिए। चूर्णिल फफूंद का प्रकोप होने पर केराथेन 0.03 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) या चूना और गंधक को 1:40 के अनुपात में मिलाकर छिड़काव करें। गंधक चूने के उपयोग से रोगों और कीटों दोनों को नियंत्रित कर सकते हैं। सैंजोस स्केल का प्रकोप होने पर डाइमेथोएट (1 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करें अथवा काइलोकोरस बाइजुगस के 30-50 वयस्क प्रति ग्रसित वृक्ष छोड़ें। यदि पौधों में जिंक की कमी हो तो 0.1 प्रतिशत (1 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहिए। बोरॉन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत सुहागा (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार सिंचाई सुनिश्चित करें तथा नमी संरक्षित करने हेतु पलवार बिछाने की व्यवस्था करें।

उद्यान प्रबंधन हो समूचा, भरपूर लाभ दे अलूचा

ग्रीष्म ऋतु आते ही अलूचा में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है अत: समय-समय पर इन्हें निकाल देना चाहिए। अलूचे के वृक्षों के समुचित विकास के लिए मई-जून में एक सप्ताह के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। जिन जगहों पर सिंचाई की उचित व्यवस्था न हो वहां पेड़ों के नीचे पलवार (मल्च) बिछा देनी चाहिए। इसके अन्य लाभ भी हैं, जैसे इसके प्रयोग से खरपतवार का उगना कम हो जाता है। यह मृदा के तापक्रम को भी ठीक रखता है साथ ही अच्छी गुणवत्ता के फल भी प्राप्त होते हैं। गर्मी के दिनों में पेड़ों को तेज धूप के हानिकारक प्रभाव से बचाने के लिए मुख्य तने पर नीले थोथे के घोल का लेप कर देना चाहिए। अलूचे की किस्मों ब्यूटी, सांता रोजा और मैथिली में अधिक फल लगते हैं एवं पेड़ों की शाखाएं फलों का भार न सह सकने के कारण टूट भी जाती हैं। इसके लिए बांस या मजबूत लकड़ी का सहारा देना चाहिए।

जापानी अलूचा की लगभग सारी किस्मों में बहुत फल लगते हैं। यदि सभी फलों को पेड़ों पर छोड़ दिया जाए तो फल छोटे आकार के होते हैं। अत: फलों की छंटाई

अलूचा

कर देनी चाहिए। फलों की छंटाई हाथ से करें। नेफ्थालीन एसिटिक एसिड अम्ल 50 पी.पी.एम. (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करें। पौधों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। अत: 0.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव फूलों की पंखुड़ियों के झड़ने से लेकर फलों के पकने के 2 सप्ताह पहले तक किया जा सकता है। जिंक और लौह तत्व की कमी की पूर्ति के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और फेरस सल्फेट के घोल का पर्णीय छिड़काव किया जा सकता हैं। चिड़ियों से फलों की रक्षा करनी चाहिए तथा यदि पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप हो तो इंडोक्साकार्ब के 0.07 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

अगली द्विमाही भी कृषि कार्यो की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसीलिए बागों पर लगातार ध्यान देना बहुत आवश्यक है। इस द्विमाही की तरह ही बागान में लगे विभिन्न फलों को उनकी आवश्यकतानुसार सस्य क्रियाओं से संजोना है। इन सभी पहलुहों पर चर्चा आपकी अपनी पत्रिका 'फल-फूल' के अगले अंक में करेंगे। ■

बोगेनविलिया की रंगीन किस्मों की बहार

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली स्थित बोगेनविलिया गार्डन में बोगेनविलिया की विभिन्न किस्मों की रंगीन छटा मार्च-अप्रैल माह में आकर्षण का केंद्र थी। फूल प्रेमियों ने बड़ी संख्या में प्रकृति के इस अनोखे नजारे का लुत्फ उठाया।

समस्त फोटो : **अशोक सिंह**

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्रः

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. मल्होत्रा, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित। सम्पादकः अशोक सिंह